अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

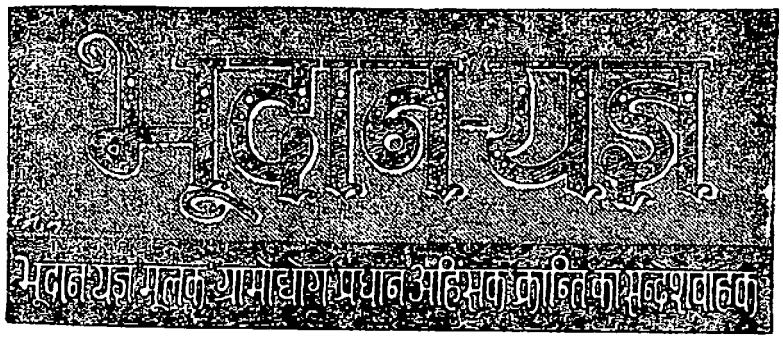

सौर श्रावण ३, शक १८७९ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार
वार्षिक मूल्य ६) एक प्रति २ आना

प्रभो ! मुझे अपनी शान्ति का साधन बना। द्वेष की जगह मुझे प्रेम के बीज बोने दे; अत्याचार के बदले क्षमा, शक और सन्देह के बदले विश्वास, निराशा के स्थान पर आशा, अन्धकार की जगह प्रकाश और विषाद की भूमि में आनन्द निर्माण करने की शक्ति मुझे प्रदान कर !

भगवन् ! दया करके मुझे यह शक्ति दे कि किसीको मेरी सान्त्वना करने की जरूरत ही न पड़े। इसके बजाय कि लोग मुझे समझें, मैं ही उन्हें समझूं। लोग मुझे प्यार करें; इसके बजाय मैं ही उन्हें प्यार करना सीखूं; क्योंकि देने ही में वह निहित है, जो हमें प्राप्त होता है। क्षमा करने से ही हम क्षमा के पात्र बनते हैं और आत्मोत्सर्ग में ही चिरन्तन जीवन का मार्ग है।

(विनयकुमार अवस्थी द्वारा प्रेषित)

—सन्त फ्राँसिस की प्रार्थना

वर्ष–३, अंक–४३ 卐 राजघाट, काशी 卐 शुक्रवार, २६ जुलाई, '५७

दुनिया की रफ़्तार !

प्रश्न : क्या ग्रामदान करने से ग्रामीण जनता सुखी जीवन बिता सकती है ? मेरा ख्याल है, आपने आज की दुनिया की गति को और जनता को ठीक तरह से पहचाना नहीं है !

विनोबा : यह सही है ! बाबा ऐसा ही एक पागल है ! अकेला तो घूमता है ! सवाल पूछने वाले समान अकल वाला होता, तो घर में बैठता, स्वार्थ में पड़ता, घर-गृहस्थी ही चलाता और भोग भोगते-भोगते जीवन बिताता ! परंतु है वह पागल मनुष्य ! उसे धंधा नहीं है, बेकार है ! लेकिन आशा रखता है, हिम्मत रखता है कि जिसको आप दुनिया की गति कहते हैं, उसको बदलेंगे। पहले कौन आशा रखता था कि भूदान में हजारों दानपत्र मिलेंगे, लाखों एकड़ जमीन दान में मिलेगी और हजारों ग्रामदान होंगे ? परंतु वह काम हुआ। आप और हम दोनों चेतन हैं। यह तो मिट्टी है हमारे हाथ में। कारीगर को कोई अकलवाला पूछे कि "यह मिट्टी लेकर क्या करते हो ? क्या उससे गणपति बनेगा या आँख, नाक बनेगी ? मिट्टी की गति क्या तुम पहचानते नहीं हो ?" कारीगर क्या कहेगा ? वह कहेगा कि "हम तो इसी मिट्टी से गणपति बनाते हैं।"

महात्मा गांधी ने भी तो इसी मिट्टी से स्वराज्य बनाया ! उसके पहले वह मिट्टी नहीं थी तो क्या थी ? हम कोई भी सिपाही नहीं थे। परंतु गांधी ने तो इस मिट्टी से ही हम सबको पैदा किया। इसीलिए आप यह मत समझो कि बाबा दुनिया की गति नहीं जानता। आज जो भी विचार समझा जाय, वह विश्व की भूमिका पर ही समझना चाहिए। आज जो भी विचार चलता है, वह अखिल दुनिया की गति देख कर ही होता है। आज हरेक को विश्वमानव बनना है। जो छोटे होंगे, वे खतम होंगे। दुनिया छोटी नहीं रहेगी। आज कम-से-कम यह तो मानना ही होगा कि "मैं भारतीय हूँ।" और चंद सालों में ही देखेंगे कि अपने को सिर्फ "भारतीय" समझने वाला भी मार खायेगा ! तब कहना पड़ेगा : "हम मानव मात्र हैं !" आज कुल दुनिया में दुनिया भर के विचारों का प्रचार हो रहा है। महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका में रहते थे, जो दुनिया का दक्षिण सिरा था और टॉल्स्टॉय रहते थे मास्को में, जो दुनिया का उत्तर हिस्सा माना जायगा। पर गांधीजी टॉल्स्टॉय के विचार के मुताबिक वहाँ काम करते थे। उन्होंने टॉल्स्टॉय को पत्र भी लिखा था कि मैं आपके विचार के मुताबिक यहाँ काम करने का नम्र भाव से प्रयत्न करता हूँ। मार्क्स रहता था-जर्मनी में, परंतु उसका विचार कुल दुनिया में फैला है। गांधीजी का भी विचार सारी दुनिया में फैला है। अभी पंडित नेहरू स्वीडन गये थे, तो वहाँ के प्रधान मंत्री ने कहा कि हम गांधीजी के विचार को मानते हैं। तो दुनिया की गति तुम समझते हो, वैसी आहिस्ते-आहिस्ते चलने वाली नहीं भाई ! वह बहुत जोर से चल रही है !

(अंगाडीपुरम्, पालघाट, २६-७)

अमंगल विचारों के परिणामस्वरूप अमंगल भावनाएँ निर्माण होती हैं और ये भावनाएँ आपको दूर-दूर ले जाकर निगलने के लिए तैयार बैठे हुए असुरों के हाथ में दे डालती हैं। फलतः आप निराधार हो जाते हैं।

कभी न समाप्त होने वाले आपके दुःखों-कष्टों का बुनियादी कारण यही है।

—श्री माताजी

मध्यम-वर्ग : खतरे के कगार पर !

(सिद्धराज ढड्ढा)

इस वक्त हम यहाँ यह सहचिंतन करेंगे कि आज हम-आप, जो साधारण नागरिक हैं, किस स्थिति में हैं, कहाँ पर हैं, हमारी क्या समस्याएँ हैं और किस प्रकार हम उनको हल कर सकते हैं। हम लोग यहाँ अधिकतर मध्यम-वर्ग से आये हैं। न तो यहाँ श्रमिक समाज के अधिक लोग हैं और न संपन्न, पूँजीवाले, प्रभाववाले या सत्तावाले समाज के ही !

अंग्रेजी में कहावत है कि 'जूता जो पहनता है, वह जानता है कि जूता कहाँ चुभता है !' आज समाज की समस्याओं का जो जूता है, वह मध्यम-वर्ग के पाँवों में है और मध्यम-वर्ग उन सभी समस्याओं से भली प्रकार परिचित है। समाज की क्या समस्याएँ हैं, किस प्रकार आज समाज में व्यक्ति दुःख पा रहा है, संघर्ष में कैसे वह सफल नहीं हो रहा है, अपने आपको वह कितना पिछड़ता हुआ पाता है, यह सारी अनुभूति मध्यम-वर्ग को आज काफी मात्रा में है। लेकिन फिर भी हमारी बदकिस्मती है कि यह मध्यम-वर्ग ही क्रांति के मामले में सबसे ज्यादा बेहोश है ! जो संपन्न-वर्ग के लोग हैं, मैं जानता हूँ कि वे कितने सतर्क हैं और किस तरह सब विचारों को तौलते हैं ! हमारे देश के एक बहुत बड़े नामी व्यक्ति से, जिन्हें आप बड़े पूँजीपति कह सकते हैं, मेरा निकट का संपर्क रहा है। एक दिन, जब कि मैं उनके साथ ही काम करता था और उस वक्त गांधीजी भी जिन्दा थे, उन्होंने चर्चा में मुझसे कहा कि **"हमको इस कम्यूनिज्म से कोई खतरा नहीं है ! हमको जो खतरे की जगह मालूम होती है, वह है, गांधी का विचार !"**

अपने देश के बड़े-से-बड़े एक पूँजीपती के ये शब्द मैं बता रहा हूँ। उन्होंने आगे कहा : **"साम्यवादी भी आखिर क्या करेंगे ? बड़े-बड़े कल-कारखाने तो उन्हें चलाने ही हैं ! हमारी व्यक्तिगत मालकियत वे खत्म कर देंगे, तो भी इन कारखानों पर राज्य का ही आधिपत्य होगा याने उनका राष्ट्रीयकरण होगा ! लेकिन कारखाने तो कारखाने चलाने वालों से ही चलेंगे न ? मजदूर उनमें काम करेंगे और मजदूरों से काम लेने वाला मैनेजर कारखाना चलायेगा ! राज्यकर्ता तो कारखाने नहीं चलाता ! वे तो हम लोगों द्वारा ही चलाये जायेंगे और कारखानों का राष्ट्रीयकरण वे करेंगे, तो मैनेजर को मुनाफे में हिस्सा भी देंगे ही !"**

उस वक्त भी इस देश में राष्ट्रीयकरण की बातें चल रही थीं। कहा जाता था कि वे छह-सात या आठ प्रतिशत मुनाफ़े से ज्यादा न लें ! पूँजी खोने का कोई खतरा उठाये बिना या अपनी पूँजी लगाये बिना छह-सात प्रतिशत मुनाफा मिल जाता है, तो कौन अक्लमन्द आदमी उसका स्वागत नहीं करेगा ? उनकी यह दलील मैंने आपके सामने इसलिए रखी कि वह वर्ग भी बेहोश नहीं है ! वे जानते हैं कि असली खतरा किस जगह है ! उधर जो गरीब हैं, दबे हुए हैं, उनके सामने भी जब एक मर्तबा जाकर स्पष्टता के साथ सब बातें खोल कर रख देते हैं, तो वे भी समझ जाते हैं कि खतरा कहाँ है ! लेकिन यह मध्यम-वर्ग ऐसी कम्बख्ती और बेहोशी में है कि वह समझता ही नहीं कि खतरा कहाँ है ! उसे खतरे की कोई चेतावनी देता भी है, तो विपरीत दलीलें देकर वह खतरे से मुँह ही मोड़ लेना चाहता है–जैसे कि खतरा आता है, तो शुतुरमुर्ग बालू में अपना सिर छिपा लेता है, उसे देखने से ही इनकार करता है ! मध्यम वर्ग की आज इसी प्रकार की स्थिति है। उसको भी कोई आराम तो नहीं मिल रहा है, यह हम सब जानते हैं। लेकिन जो कुछ थोड़ा उसको

www.vinoba.in

आराम का आभास है, उसमें भी खलल पड़ेगा, ऐसा उसको भय है ! इसलिए वह आँख और कान बंद करके ही रहना चाहता है ! वरना परिस्थिति तो हम सबके सामने प्रत्यक्ष है, स्पष्ट ही है ! वैद्यनाथ बाबू ने इशारा किया था कि छोटे-बड़े, गरीब-अमीर, प्रत्येक में स्वार्थ की भावना तो भरी हुई है ही, पर मध्यम-वर्ग के तो रग-रग में वह व्याप्त है ! इसका नतीजा भी हम देख रहे हैं।

आज हमको सिखाया जाता है कि जीवन एक संघर्ष है और उसमें वही विजयी होता है, जो बलशाली और सक्षम हो। जो एक को गिरा कर खुद आगे बढ़ेगा, उसीको इस होड़ में मौका मिलेगा। इसी तरह की आज की सारी शिक्षा-दीक्षा है ! हमने समस्याओं के हल के कई तरीके भी खोजे, लेकिन वे सब ऐसे निकले कि जिनके सहारे हरेक वर्ग, हरेक गिरोह ने अपना-अपना ही संगठन बनाया ! आज मजदूरों, पूँजीपतियों, कारखानदारों, कर्मचारियों, सबका अलग-अलग ही संगठन है। सामने वाले पर या सरकार पर दबाव पड़े और हम उनसे अपना-अपना फायदा उठा लें, यही सबकी दृष्टि रहती है। जरा कुछ हुआ नहीं कि हड़तालें हो जाती हैं ! डाक-तार विभाग की अभी की धाँधली आप देख ही रहे हैं ! पिछले डेढ़ महीने से डाक-तार पहुँचने का कोई भरोसा ही नहीं है। कभी-कभी हड़तालों के ऐसे भी कारण होते हैं कि देख कर हैरानी होती है। बताते हैं कि एक जगह के रेलवे-डाकघर में इसीलिए हड़ताल हुई कि उनकी बगल के सेंट्रल आफिस में खस की टाट्टियाँ लगी हैं, तो हमें भी वे क्यों न मिलें ! यह आज के वर्ग-संघर्ष का एक नग्न रूप है ! करोड़ों भूखे-नंगे कड़कती धूप में खेत पर पसीना बहा रहे हैं, उसकी चिंता स्वयं मजदूर नहीं करता। वह चाहता है कि उसीको पहले मिले, ज्यादा मिले ! उधर हजार रुपया भी पाने वाला कहता है कि उसे दो हज़ार रुपया मिले ! विद्यार्थियों की तक यूनियनें बन गयी हैं और अपने गुरुओं के साथ ही उनका संघर्ष शुरू हो गया है ! एक मालिक-मजदूर की-सी स्थिति उनमें आ गयी है। ये सब एक बड़े खतरे के चिह्न हैं। अगर इनसे हम सावधान न हों, तो हमारी हालत बदतर ही होती जायगी। गाँव में कोई पशु मरता है और उसे उठा कर यदि दूर फेंक दिया जाता है, तो चारों ओर से गिद्ध आकर उस पर टूट पड़ते हैं। आज के समाज की स्थिति भी ऐसी ही है ! वह एक मुर्दा लाश की तरह पड़ा है और हर गिरोह उसके ऊपर गिद्ध के समान, अपनी ही अपनी यूनियनें बना कर टूट पड़ता है ! व्यक्तिगत और वर्गगत हितों को सामने रख कर उस समाज की बोटी-बोटी हरेक नोचना चाहता है। यह है आज के समाज का नंगा चित्र ! इस होड़ में वही जीतेगा और जीत रहा है, जिसके पास पैसे का, सत्ता का, अधिकार का और बुद्धि का जोर हो ! जो किसी-न-किसी प्रकार से बलशाली है, वही जीत भी रहा है और कमजोर बेचारा हार रहा है।

संघर्ष का परिणाम

पर ऐसा कब तक चलेगा ? सभी तो बुद्धि, पैसा, संपत्ति और सत्तावाले तो हो नहीं सकते और सत्ता, बुद्धि और पैसेवालों में भी फिर आपस में होड़ ही शुरू होगी, क्योंकि सबको तो मनचाहा मिल नहीं सकता ! मुर्दे की लाश पर बोटियाँ ही जब कम रह जाती हैं, तो गिद्धों और कुत्तों में लड़ाई होने ही लगती है ! यही हालत समाज की होने वाली है, क्योंकि समाज से लेने वाले ही बहुत हैं, उसे देने वाले कोई नहीं ! महाभारत के बाद यादव-स्थली मची थी और सभी का संहार हो गया था ! वैसे ही आसार आज नजर आ रहे हैं। कम-ज़-कम मध्यम-वर्गवाले तो इससे सबक लें !

हमें सिखाया गया था कि अगर हमारे पास ताकत है, तो कमजोरों का रक्षण करें। धन है, तो गरीबों की राहत पहुँचायें। बुद्धि है, तो समाज की सेवा करें और सत्ता है, तो सबका भला करें। लेकिन इस भारतीय परंपरा को आज हम भूल ही गये और सिर्फ उसके कोरे गौरव-गान में लगे हैं कि वह अध्यात्मिक है, अच्छी है आदि आदि। पर व्यवहार में तो धन-बुद्धि-शक्ति वालों पर, इन वस्तुओं में वृद्धि करके, होड़ में दूसरों को जीतने का ही नशा सवार है। धर्म-ग्रंथों के उपदेश और सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह आदि बातें पुराने जमाने की बातें मान कर हर व्यक्ति आगे बढ़ने वाले की टाँग पीछे खींच कर स्वयं आगे बढ़ने में लगा हुआ है।

इस संघर्ष में जो भी विजयी हो, मध्यम-वर्ग कदापि नहीं जीत सकता, मैं यह दावे के साथ कहता हूँ ! मैं तो मध्यम-वर्ग का हूँ और मध्यम-वर्ग से बहुत मिलते-जुलते रहता हूँ, इसलिए स्थिति का कुछ अंदाज भी मुझे है। मध्यम-वर्ग पूछता भी है कि आप गरीबों के उद्धार की तो बातें करते हैं, लेकिन हमारे लिए क्या सोचते हैं ? मैं उनसे कहता हूँ कि अगर वह नहीं चेतेगा और मध्यम-वर्ग ही बना रहेगा, तो इस दुनिया में उसे मिट जाने के सिवा कोई चारा ही नहीं है। इस तीव्र प्रतिस्पर्धा के बीच वह संपन्न-वर्ग में तो दाखिल हो ही नहीं सकता। सैकड़ों आदमियों में से बिड़लाजी एकाध ही बाहर निकलते हैं ! बिड़लाजी से मेरा मतलब उन व्यक्तियों से है,जो बड़े हैं। यह तो आज हालत है ! फिर भी मध्यम-वर्ग इसी जीवन-संघर्ष में लगा हुआ है और अपने ही स्वार्थ की बात सोचने में वह अपना भला देखता है। अपने से बाहर तो वह देखना ही नहीं चाहता। उसके पास बुद्धि है और वह उसे इस भयानक परिस्थिति में सोचने के लिए मजबूर किये बिना भी नहीं रहेगी, परंतु यदि उसके बाद भी यदि वह नहीं चेतता है, तो खत्म हुए बिना नहीं रहेगा। अतः वह स्थिति को बेकाबू न होने दे और अपने स्वार्थ की चिंता छोड़ कर दूसरे के स्वार्थ की चिंता वह करे, तो ही आगे उसका निस्तार है। समाज को बचाने की यही एक प्रक्रिया अब बची है। कोई दूसरा बचने का साधन हमारे पास रहा ही नहीं है। सब तरीकों के नतीजे हम देख ही रहे हैं ! पर आप भूल जाइये—सर्वोदय को, समाजवाद को, साम्यवाद को और यज्ञ-दान-तप की भी बात को ! हाँ, इतना तो करें कि जो समस्याएँ हमारे सामने हैं, उन पर सोचें और कोई राह ढूँढ़ें ! राह यही हो सकती है कि हम दूसरों का हित पहले सोचें ! अगर इस राह पर अब भी हम नहीं चलते हैं, तो यह तयशुदा बात है कि इस संघर्ष में हम पिछड़ जायेंगे और उस हालत में सबसे ज्यादा नुकसान मध्यम-वर्ग का ही होगा। अतः एक-दूसरे की हमें अब चिंता करनी ही पड़ेगी, यह विज्ञान-युग का भी तकाजा है। भूदान-ग्रामदान-सर्वोदय भी आखिर क्या हैं, सिवा इसके कि पड़ोसी की चिंता पहले करें ?

एकमात्र रास्ता

दूसरी बात आपके सामने मैं यह रखना चाहता हूँ कि इस समय संपन्नों और विपन्नों में जो संघर्ष है, उन दोनों के बीच मध्यम-वर्ग फँसा हुआ है और उस संघर्ष में भी वह पिसा जा रहा है। इससे बचने का भी एक ही इलाज है कि वर्ग-विषमता ही समाज से हट जाय। तब वर्ग-संघर्ष भी जाता रहेगा। अतः जो इस दुष्टचक्र से बाहर निकलना चाहते हैं, उनका कर्तव्य है कि वर्ग-विषमता दूर करें, वर्गों का निवारण करें और सारे समाज को एक ही वर्ग बनायें। निस्संदेह एक वर्ग वही वर्ग रह सकता है, जो उत्पादक बनेगा। इसलिए मध्यम-वर्ग को उत्पादक वर्ग की ओर ही बढ़ना होगा। आज समाज में श्रमवालों के और बुद्धिवालों के, ऐसे अलग-अलग दो वर्ग पड़ गये हैं और हम अपनी बुद्धि का उपयोग कुशलता से धन बटोरने में ही लगा रहे हैं। यही श्रेणी-विभाजन हमको तोड़ना होगा, क्योंकि विषमता का, शोषण का मूल कारण वही है। श्रमजीवी समाज की ओर हमारा कदम बढ़े, यही उसका एकमात्र इलाज है।

श्री राममूर्तिजी ने कार्यकर्ताओं के लिए निर्देश किया कि किस तरह श्रम के आधार पर वे अपने जीवन को मोड़ें। कार्यकर्ताओं की दो श्रेणियाँ होती हैं। एक वे, जो घूम-घूम कर विचार-प्रचार करते हैं। उनके लिए उन्होंने एक विचार रखा। दूसरे कार्यकर्ता वे, जो हमारे जैसे एक स्थान पर बैठ कर काम करते हैं। अपनी-अपनी संस्थाओं में, अपने-अपने समाज में मध्यम-वर्ग के ऐसे जो लोग बैठे हुए हैं, उन्हें भी सोचना होगा कि किस तरह अपनी जीविका का संबंध श्रम के साथ जोड़ें। आज इस विचार पर अमल करने का समय आ गया है। आज शहरों में कोई सौ, कोई डेढ़ सौ, कोई दो सौ, कोई ढाई सौ रुपया कमाता है, पर इतने में भी बड़ी मुश्किल से अपनी घर-गृहस्थी वह चला पाता है। लेकिन फिर भी घर पर काम करने के लिए, बाजार से सामान लाने के लिए, बर्तन-कपड़े धोने के लिए उसके यहाँ नौकर या नौकरानी हैं ! पर यह सब कब तक चलेगा ? हम नम्रतापूर्वक मध्यम-वर्ग से, खासकर पढ़े-लिखों से निवेदन करना चाहते हैं कि जमाने के इशारे को वे समझें ! श्रमजीवन और साम्य-जीवन की ओर यदि हमारा कदम अब भी नहीं बढ़ा, तो हम तो डूबेंगे ही, समाज को भी ले डूबेंगे, क्योंकि नेतृत्व अधिकतर मध्यम-वर्ग ही करता है !

इसलिए, एक ओर तो हमें पड़ोसी की चिंता पहले शुरू कर देनी होगी, उसके बारे में सोचना होगा, उसकी स्थिति देखनी होगी, उसके सुख-दुख में हिस्सा बँटाना होगा। दूसरी ओर हमें श्रमनिष्ठ जीवन की ओर बढ़ना होगा एवं समानता की आराधना करनी होगी। इसे आप चाहे सर्वोदय कहिये, समाजवाद कहिये या और कुछ ! आज हमारे सामने जो समस्याएँ मुँह बायें खड़ी हैं, उनका इलाज कोई दूसरा है ही नहीं, यह हम नम्रतापूर्वक कहना चाहते हैं। मध्यम-वर्ग किसी क्रांति को रोकने वाला भी और बढ़ाने वाला भी होता है। इतिहास ने हमेशा यह जिम्मेवारी मध्यम वर्ग पर डाली है। मध्यम-वर्ग ने क्रांतियों का संचालन भी किया है। अतः हम सोचें कि हम क्रांति के अग्रदूत बनना चाहते हैं या प्रतिक्रियावादी ? इसी पर देश की भी भलाई और बुराई निर्भर है !*

*बिहार प्रांतीय द्वितीय सर्वोदय-संमेलन, पूसा रोड के ता० २९-६ के भाषण का सार।

www.vinoba.in

शिक्षकों का महान् दायित्व !

(विनोबा)

त्वं नो अस्या अमतेरुत क्षुधो अभिशस्तेरव स्पृधि
त्वं न ऊति तव चित्रया धिया शिक्षा शचिष्ठ गातुवित्।

—हे शक्तिशाली, हे गातुवित्, तू हमको उत्तम शिक्षण दे। तेरी भिन्न शक्तियाँ सामने दिखा। तेरी बुद्धि प्रगट कर। तेरी रक्षण-शक्ति, उत्पादन-शक्ति सब दीखा। विविध पीड़ाएँ हमको बाधाएँ दे रही हैं, उनका निरसन करने वाला तेरे सिवा कौन मिलेगा ?

* * *

यहाँ सब बुनियादी तालीम के शिक्षक हैं। संपूर्ण देश-रूपी जो मकान हमें बनाना है, उसकी वे बुनियाद हैं, इसलिए वे कुल देश की ही बुनियाद के शिक्षक हैं। उनके सामने जो विचार हम रखते हैं, अगर उनको वह जँच जाता है, तो सारे देश में वह फैल सकता है।

शिक्षक को वेद में "गातुवित्" कहा है, जिसको अंग्रेजी में "पाथ-फाइंडर" कह सकते हैं। 'गातु' याने "गमन-मार्ग", 'गातुवित्' याने गमन-मार्ग को ढूँढ़ने वाला। शिक्षक के लिए वेद का यह विशेष शब्द है। गुरु को अत्यन्त शक्तिशाली मार्गदर्शक के रूप में वेद देखता है। ऊपर कहा है, "हे अत्यन्त शक्तिशाली गुरु, हे मार्ग ढूँढ़ने वाले ! तुम हमें शिक्षण दो।" इस तरह शिक्षक को अत्यन्त शक्तिशाली कहा है इसलिए शिक्षक मन से कभी दुर्बल नहीं हो सकता। सबसे अधिक ताकत अगर किसीके हाथ में है, तो वह शिक्षक के हाथ में है। इसीलिए वह बड़ा है। ज्ञान देकर भावी योजना का मार्गदर्शक शिक्षक हो सकता है, इसलिए उससे कोई अधिक शक्तिशाली भी हो नहीं सकता। पर अगर वही कमजोर रहा, तो कुल मार्गदर्शन ही कमजोर होगा, कुल योजना कमजोर हो जायगी और कुल देश कमजोर बनेगा।

शिक्षकों की दुरवस्था

परंतु इन दिनों शिक्षकों की हैसियत इतनी हलकी कर दी गयी है कि वे अपने में ताकत ही महसूस नहीं करते, क्योंकि वे नौकर की हैसियत में आ गये हैं ! सरकार जो रास्ता बतलायेगी, उस रास्ते पर उनको चलना है। सरकार अपने विद्वानों के जरिये शिक्षण की योजना बनाती है, परंतु आखिर वे होते हैं, सरकारी दिमाग के पीछे काम करने वाले विद्वान ! तो जिस रंग की सरकार होगी, उसी रंग के वे विद्वान होते हैं। ऐसे विद्वान गुलाम, से अधिक हैसियत के नहीं हैं, वे स्वतंत्र बुद्धि के विद्वान नहीं होते हैं। उनको आदेश दिया गया होता है। वे अधीन होते हैं। फिर जो योजना बनती है, उसीके आधार पर शिक्षकों को अपनी योजना बनानी पड़ती है। उस बनी-बनायी योजना में इधर एक कॉमा, उधर एक विराम-चिह्न वगैरह फरक शिक्षक कर सकते हैं, परंतु इससे ज्यादा फरक वे नहीं कर सकते। शिक्षकों की यह हालत सबको मालूम है। विद्यार्थी भी इसको देखता है। इसलिए विद्यार्थी अपने उत्तर-जीवन में शिक्षकों से संबंध नहीं रखता। विद्यार्थी के जीवन में शिक्षकों को स्थान ही नहीं है ! आज विद्या फैलाने की कोशिश हो रही है, स्कूलों की और शिक्षकों की संख्या भी बढ़ रही है, लेकिन उसमें गुरु-भावना नहीं रहती। शिक्षक अच्छे हैं, याने वे अच्छे नौकर हैं। शिक्षक खराब हैं, याने वे खराब नौकर हैं ! दोनों हालत में वे नौकर हैं। अपने घर में माँ नौकर नहीं है, पिता नौकर नहीं है, भाई नौकर नहीं है, मित्र नौकर नहीं हैं। लेकिन हमारे शिक्षक नौकर हैं ! इसलिए हमारे जीवन के गंभीर प्रसंगों में हम अपने पिता, माता, भाई, मित्र की सलाह ले सकते हैं। यह भी हो सकता है कि कोई महान् नेता हो, तो उसकी भी सलाह लेंगे, परंतु शिक्षक की सलाह विद्यार्थी नहीं लेगा !

न्यायाधीशों जितने तो स्वतंत्र हों !

उसका कारण यही है कि शिक्षण-विभाग सरकारी-विभाग है, स्वतंत्र विभाग नहीं है। न्याय-विभाग में न्यायाधीश सरकारी होते हैं। सरकार द्वारा बनाये कानून के वश वे होते हैं, फिर भी वे स्वतंत्र होते हैं। वे भी नौकर हैं, कानून में बदल नहीं कर सकते, जो कानून सरकार ने बनाया, उसको उन्हें मानना पड़ता है। फिर भी वे आजाद हैं एवं सरकार के बनाये कानून को मान कर भी सरकार के ही खिलाफ न्याय दे सकते हैं। तो न्यायाधीश जितना स्वतंत्र है, उससे बहुत ज्यादा शिक्षक को स्वतंत्र होना चाहिए। पर आज तो जो स्वतंत्रता न्याय-विभाग को है, उतनी भी शिक्षण-विभाग को नहीं है। शिक्षक तो सारे देश की बुद्धि को, सारे देश के हृदय को मार्गदर्शन करने वाला है न ? इस वास्ते उसे तो अधिक शक्तिशाल होना चाहिए ! इसीलिए तो वेद में भी शिक्षक को सबसे अधिक शक्तिशाली कह दिया—"शचिष्ठ"—अत्यन्त श्रेष्ठ और शक्तिशाली और 'गातुवित्'-मार्ग ढूँढ़ने वाला। वेद में प्रार्थना की है : "शिक्षा शचिष्ठ गातुवित्"—हे श्रेष्ठ शक्तिशाली, मार्ग ढूँढ़ने वाले ! हमें शिक्षा दे।" यहाँ शिक्षक को अत्यंत शक्तिशाली कहा है। याने उसकी स्वतंत्र बुद्धि की प्रभा को, गति को कोई बाधा ही नहीं है। जैसे हंस आकाश में खुल कर उड़ेगा, वैसे ही उसकी गति होगी। गरुड़ के समान या श्येन पक्षी के समान आक्रमणकारी विहार करने वाला शिक्षक होना चाहिए।

उससे मार्गदर्शन पाने पर हम उससे क्या चाहते हैं, यह भी वेद ने कहा है। आज जो हम चाहते हैं, वे ही चीजें वहाँ कही गयी हैं : "त्वं नो अस्या अमतेरुत क्षुधो अभिशस्तेरव स्पृधि"—"यह जो हमारा अज्ञान है, उसके निरसन का मार्ग हमको दिखा, हमारी भूख के निरसन का मार्ग दिखा, तरह-तरह की जो बीमारियाँ हैं, उनके निरसन का मार्ग दिखा।"

यहाँ तीन बातों का उल्लेख है : अमति, क्षुधा और अभिशस्तु। इन तीन बातों के निरसन का मार्ग दिखाने का काम शिक्षक को करना है, इस वास्ते वह "शचिष्ठ" होना ही चाहिये। याने ज्ञान में प्रवीण, उत्पादन में बलवान होना चाहिये, उसके बिना क्षुधा कैसे मिटेगी ? और विविध प्रकार के सृष्टि-विज्ञान का भी ज्ञान होना चाहिये, क्योंकि उसके बिना बीमारियाँ कैसे मिटेंगी ? चित्र-विचित्र बीमारियाँ हैं, तो चित्र-विचित्र ज्ञान भी चाहिए। तो सृष्टि का विविध ज्ञान तरह-तरह के रोगों को मिटायेगा, उत्पादन की क्षमता भूख को मिटायेगी और बुद्धि और चिंतन-शक्ति होगी, तो अज्ञान मिटेगा।

आज मैं सहज वेद की किताब देख रहा था, तो मेरे सामने उपर्युक्त श्लोक आया। पढ़ते ही उस पर मेरी दृष्टि स्थिर हो गयी। मैंने सोचा, वही आपके लिए बहुत उपयुक्त होगा !

(बेसिक-स्कूलों के शिक्षकों के साथ, रामनाडुकरा, कोलीकोड़, ९-७-'५७)

विनोबा-प्रश्नोत्तरी

प्रश्न : मार्क्सिस्ट तो 'सांपत्तिक उन्नति' में ही दुनिया का कल्याण मानते हैं। आपके भूदान-काम को देख कर भी ऐसी ही शंका आती है कि क्या आप भी भौतिक उन्नति के लिए तो कहीं यह काम नहीं कर रहे हैं ?

विनोबा : इस प्रश्न में गहरा अज्ञान है ! हमारा आंदोलन केवल जमीन 'लेने' का आंदोलन नहीं, यह जमीन के 'दान' का आंदोलन है। 'दान' भौतिक वस्तु है या आध्यात्मिक ? घी का डिब्बा जलना और यज्ञ में घी की आहुति देना, पैर फिसल कर ऊपर से नीचे गिरना और ऊपर से नीचे उतरना, कोई किसी बाप की कन्या भगाता है और बाप स्वयं किसीको कन्या-दान करता है, इन सबमें कुछ फरक है या नहीं ? तो जमीन 'छीनने' का आंदोलन और जमीन 'दान' देने का आंदोलन एक ही कैसे है ? बाबा भूदान माँगता है और कम्युनिस्ट जमीन छीनना चाहते हैं। दोनों में जमीन शब्द समान आ गया, तो लोग समझते हैं, अरे यह तो कम्युनिस्ट जैसा ही बना ! भौतिक कार्य में दान नहीं होता है ! प्रेम से दान करते हैं, तो उसको 'स्पिरीच्युअल वैल्यु' (आध्यात्मिक मूल्य) आ जाता है। करुणा अगर हृदय में है, तो दान होगा। तो करुणा का आवाहन करने वाला ही यह आंदोलन है। अब यह आंदोलन, आप ही पहचानिये कि, भौतिक है या आध्यात्मिक !

प्रश्न : मनुष्य काम का फल जल्दी चाहता है। आज की सरकार अच्छे काम आसानी से कर सकती है। जनता कब तक आपके काम की राह देखे ?

विनोबा : सरकार आसानी से करती है, तो वह करे। हम आपकी सरकार को रोकते नहीं हैं। सरकार जल्दी करती, तो छः साल बाबा को घूमाया ही क्यों ? बाबा भी आराम लेता या अगर गुरुवायूर या पद्मनाभम् मंदिर देखने होते तो ही वह घूमता ! तो सरकार को कौन रोकता है ? लेकिन इधर छः साल में लाखों एकड़ जमीन दान में मिली, लाखों लोगों ने दान दिया, हजारों ग्रामदान मिले, पर उधर सरकार के लिए मसला हल होना बाकी ही है ! पंडित नेहरू दुख से कह रहे हैं कि लैंड रिफार्म के लिए देरी हो रही है ! पर सर्वोदय-सम्मेलन में कम्युनिस्ट सरकार के मंत्री, वहाँ के मुख्य मंत्री के प्रतिनिधि बन कर आये थे, तो उन्होंने भी जाहिर किया कि जमीन की मालकियत मिटाने का काम कानून से नहीं होगा ! ताली दो हाथों से बजती है। एक हाथ है सरकार और एक हाथ है जनता। दोनों मिल कर काम करेंगे, तभी तो होगा ! (ता० २४, २६ जून को, केरल में)

---

www.vinoba.in

सर्वोदय-क्रांति प्रगति-पथ पर है या पीछे हट रही है ?

(धीरेन्द्र मजूमदार)

प्रश्न : क्या आप यह मानते हैं कि क्रांति एक ही चाल से चलती है ? क्या उसकी गति कभी धीमी या कभी तेज नहीं होती है ?

उत्तर : जरूर होती है। प्रकृति की हर वस्तु की प्रगति में ऐसा होता है। उसके कई कारण होते हैं। कभी बाहरी परिस्थिति की प्रतिक्रिया से क्रांति की चाल में तेजी आ जाती है और कभी क्रांतिकारियों की आंतरिक शक्ति के कारण ! अक्सर बाहरी परिस्थिति की प्रतिक्रिया क्रांति की चाल पर अधिक असर करती है। आजकल देश की आर्थिक परिस्थिति डाँवाडोल है। हो सकता है कि इस कारण कभी आपके काम में तेजी भी आ जाय। लेकिन वह कोई बुनियादी उसूल नहीं होता है। उसूल तो क्रान्ति की निरन्तर प्रगति का ही होता है। अगर तेजी का कोई उसूल है, तो वह परिस्थिति के अन्दर ही है। समाज में क्रांति हमेशा वांछनीय होती है, क्योंकि मानव-समाज निरन्तर प्रगतिशील है और समाज की प्रगतिशीलता के कारण परिस्थिति भी निरन्तर परिवर्तनशील है। लेकिन जब कभी कोई चीज केवल वांछनीय ही रहती है, तो वह एक दार्शनिक विचार-मात्र है, ऐसा माना जाता है। उसका बोध उन्हीं विचारकों को होता है, जो क्रांत-दर्शी पुरुष होते हैं। उस स्थिति में वह जनक्रांति का रूप नहीं लेता है। उसकी गति धीमी है या तेज है, यह सवाल भी साधारणतः लोगों के मन में नहीं उठता, लेकिन परिस्थिति का परिवर्तन जब काफी आगे चला जाता है और मनुष्य रूढ़ि-ग्रस्त दिमाग के कारण काफी पीछे रह जाता है, तो समाज की सारी पद्धतियाँ जड़ होकर सड़ने लगती हैं। ऐसी हालत में क्रांति केवल वांछनीय ही नहीं, बल्कि आवश्यक भी हो जाती है।

ऐसी ही अवस्था में जो विचार 'दर्शन' के दायरे में रहा, वही जन-क्रांति का रूप ले लेता है। फिर सारी जनता का दिमाग उसी ओर केन्द्रित होने के कारण वह गतिमान होता है। उदाहरण के लिए अहिंसा की बात ले लीजिये। हजारों वर्षों से अहिंसा वांछनीय रही है। लेकिन मनुष्य की समस्याओं के समाधान में हिंसा की ही आवश्यकता लोग मानते थे। सामाजिक समस्याओं के समाधान में भी मनुष्य हिंसा-निष्ठ रहा है। लेकिन आज मानव-समाज ने बौद्धिक, सांस्कृतिक तथा वैज्ञानिक दृष्टि से इतनी अधिक प्रगति कर ली है कि आज समस्याओं के समाधान में हिंसा की शक्यता पर कोई निष्ठा नहीं रह गयी है। अतः मनुष्य आज यह महसूस कर रहा है कि अहिंसा इस युग के लिए केवल वांछनीय ही नहीं, बल्कि आवश्यक भी है। यही कारण है कि जहाँ पुराने युगपुरुषों की वाणी को लोगों ने धर्म-कथा के रूप में ही ग्रहण किया था, वहाँ महात्मा गांधी की अहिंसा-वाणी को मनुष्य ने धार्मिक क्षेत्र तक ही मर्यादित न रख कर उसे सामाजिक क्रांति का रूप दिया है। अहिंसा का विचार अब एक क्रांतिकारी विचार माना जाता है, क्योंकि अन्याय का प्रतिकार, धर्म की रक्षा, यहाँ तक कि समाज की आत्मरक्षा के लिए भी मनुष्य को हिंसा की पुरानी मान्यताओं को बदल कर अहिंसा की नयी मान्यताओं को स्वीकार करने के लिए बाध्य होना पड़ रहा है।

पुरुषार्थ को आवाहन

इसी तरह व्यक्तिगत सम्पत्ति के विचार को लीजिये। प्राणी-मात्र मूलतः आत्म-रक्षा के आकांक्षी होते हैं, क्योंकि प्रकृति की मौलिक वृत्ति आत्मरक्षा है। इसी प्रवृत्ति के नतीजे से लोगों में सम्पत्ति-संग्रह की वृत्ति का जन्म हुआ। लोग जब सक्षम रहते हैं, तो वे अपने श्रम से पैदा करके अपना गुजारा करते हैं। लेकिन जीवन-संघर्ष के दौरान में जब वे कमजोर पड़ते हैं, तो उनके सामने अपना गुजारा याने अपने संरक्षण की समस्या खड़ी हो जाती है। इसी समस्या के समाधान में लोगों ने बुरे दिनों के लिए कुछ बचा रखने की बात सोची। यह चीज बढ़ते-बढ़ते व्यक्तिगत मालकियत के विचार के रूप में परिणत हो गयी और आज दुनिया में व्यक्तिगत मालकियत का संरक्षण कानून द्वारा हो रहा है, क्योंकि जीवन-संघर्ष में व्यक्तिगत मालकियत की आवश्यकता मनुष्य को मान्य हुई। फिर क्रमशः परिस्थिति बदली। व्यक्तिगत सम्पत्तिवाद के फलस्वरूप प्रतिद्वन्द्वितावाद की सृष्टि हुई और इस प्रतिद्वन्द्वितावाद ने संघर्ष-वाद तथा सत्ता-वाद को जन्म दिया। फिर इन वादों का शास्त्र-निर्माण क्रमशः हुआ, परन्तु परिणामस्वरूप उसकी जटिलता भी बढ़ी। जीवन-संघर्ष जटिल से जटिलतर होता गया। फलस्वरूप आज लोग व्यक्तिगत रूप से जीवन-संघर्ष में सफल नहीं हो रहे हैं। व्यक्तिगत सम्पत्ति-वाद में अब संरक्षण की कोई ज़मानत नहीं रह गयी है। गाँव-गाँव में आन्तरिक प्रतिद्वन्द्विता के कारण लोग यह बात महसूस करने लगे हैं कि वे व्यक्तिगत सम्पत्ति के ही सहारे जीवन-संघर्ष में पार नहीं पा सकते। वे निरन्तर हारते जा रहे हैं। परिणाम में वे पूँजीवाद की वज्र-मुष्टि के नीचे दबते चले जा रहे हैं। ऊपर के पूँजीपति भी अपनी सम्पत्ति के सहारे व्यक्तिगत रूप से जीवन के संरक्षण का कोई सहारा नहीं देख रहे हैं। वे क्रमशः सत्ता के गर्भ में विलीन होते चले जा रहे हैं। नतीजा यह हो रहा है कि आज सत्ता सर्व-ग्रासी होकर मानव की आत्मा को निर्दलित करती जा रही है। ऐसी परिस्थिति में मनुष्य के सामने व्यक्तिगत सम्पत्ति-वाद को समाप्त कर जीवन-संघर्ष के लिए सामूहिक वाद की ओर जाने की अनिवार्यता महसूस हो रही है। इसी अनिवार्यता के बोध ने ही आज क्रान्ति का रूप लिया है। आज जो ग्रामदान हो रहे हैं, उनके मूल में भी परिस्थिति की अनिवार्य आवश्यकता ही छिपी हुई है ! गाँव में चाहे भूमिपति हो या भूमिहीन, सबके सब परेशान हैं। भूमिपति भी अपनी मालकियत में अलग से अपना संरक्षण नहीं देख रहा है। हर व्यक्ति आज की व्यवस्था के कुछ विकल्प की खोज में है। ऐसी अवस्था में विनोबा ने ग्रामदान की आवाज उठायी और सारे गाँव एक परिवार के रूप में हो जायें, यह बात आज जल्दी लोगों की समझ में आ रही है।

सारे गाँव एक परिवार के रूप में रहें, सम्पत्ति सारे गाँव की हो, यह विचार नया नहीं है। लेकिन अब तक वह विचार केवल 'वांछनीय' ही रहा; परन्तु आज वह जनता की आत्मरक्षा के लिए 'अनिवार्य' रूप से आवश्यक हो गया। इसलिए यह बात युग-क्रांति की प्रक्रिया बन गयी है। अतएव इस क्रांति की गति उसी अनुपात से तेज होगी, जिस अनुपात से आवश्यकता की अनिवार्यता की तेजी होगी। हमारा पुरुषार्थ इस बात में है कि हम मनुष्य की बेहोशी का निराकरण कर उसकी दृष्टि युग की आवश्यकता की ओर खींचें तथा क्रांति के संगठन में जनता को मदद करें। इसकी भी तेजी हमारे और आपके जीवन में निष्ठा के अनुपात से ही होगी। (समाप्त)

अपने भी धन की वासना न रहे !

प्रश्न : श्रीमान् लोग त्याग करें, ऐसा कहा जाता है, परंतु श्रीमानों की संपत्ति पर गरीब लोग वासना न रखें, यह क्यों नहीं कहा जाता ? गरीबों को क्या अपने ही परिश्रम पर आधार नहीं रखना चाहिए ?

विनोबा : गरीबों को दूसरों की संपत्ति पर वासना नहीं रखनी चाहिए, यह ठीक ही है, परंतु धर्म दुहरा होता है। हरेक बच्चा माता-पिता की आज्ञा पालन करे, यह धर्म है। पर दूसरा धर्म यह भी है कि माता-पिता बच्चे का अच्छी तरह पालन करें। पतिव्रता स्त्री के समान पति का भी यह धर्म है कि वह उसके प्रति वफादार रहे और अपना जीवन संयमी रखे। इस तरह धर्म दुहरा होता है। चोरी करना पाप मानते हैं, तो संग्रह करना भी पाप है। चोरी करने वाले को सजा देते हो और जो संग्रह करता है, उसको बैठने के लिए गद्दी देते हो ! चूँकि वह धनिक है, इसीलिए क्या उसका आदर करना चाहिए ? तो ये दोनों ही पाप हैं। पर एक चीज को पाप मानते हो और दूसरी को नहीं, तो धर्म एकांगी बनेगा। धर्म कहता है, समाज में अस्तेय नहीं होना चाहिए। पर साथ-साथ संग्रह भी नहीं होना चाहिए, ऐसा भी धर्म ने कहा है। यम के साथ पाँच बातें कही गयी हैं : अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, असंग्रह। तो अस्तेय के साथ असंग्रह भी जोड़ दिया है।

सरकार क्या करती है ? मृत्यु-कर लगाती है। अभी बजट में संग्रह पर भी कर लगाया गया है। याने छीनने की ही बात हुई। यह अच्छा तो नहीं है। परंतु करना पड़ता है। समाज में अव्यवस्था होगी, इस वास्ते चोरों को जेल में भेजा जाता है, परंतु संग्रहवालों को कुछ नहीं किया जाता।

आपने बताया कि श्रीमानों के पैसे पर गरीब वासना रखते हैं, तो हममें भी तो वासना है ! इस वास्ते हम संग्रह करके रखते हैं। नहीं तो क्या जरूरत थी संग्रह करने की ? गरीबों को हम जरूर कहेंगे कि दूसरों के धन पर वासना नहीं रखनी चाहिए। "मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।" शंकराचार्य ने अर्थ किया है—"दूसरों के धन की वासना मत रखो और 'अपने' भी धन की वासना नहीं रखनी चाहिए।" लेकिन श्रीमान् अपने धन की वासना रखता है।

सौ के हजार कब होंगे, हजार के लाख कब होंगे, यही वह सोचता रहता है। वह अपनी तो वासना रखेगा, पर दूसरों को कहेगा कि वासना नहीं रखनी चाहिए, तो यह कैसे संभव है ? अतः गरीबों से कहते हैं कि तुम अपनी श्रम-शक्ति से संपन्न हो, तुम्हारी श्रम-शक्ति समाज को समर्पण कर दो। श्रीमानों को कहते हैं कि तुम्हारे पास संपत्ति है, तुम अपनी संपत्ति समाज को अर्पण करो। आज तो दोनों संग्रही बने हैं। इसलिए देना सबका धर्म है और जो धर्म होता है, वह सबके लिए होता है।

---

www.vinoba.in

रोग की जड़

(दादा धर्माधिकारी)

आज मनुष्य की समस्याओं का समाधान बिना बुद्धि-विवेक के नहीं हो सकता। बाकी सब शक्तियाँ आज कुंठित हो चुकी हैं। सैनिक-शक्ति तो समस्याओं के हल के साधन-रूप में अमान्य हो ही रही है, राज्य-शक्ति भी जवाब दे रही है। विज्ञान स्वयं एक समस्या बन गया है और यहाँ तक कि उसने मनुष्य को भी समस्या बना दिया है।

इस सारे संघर्ष का मूल कारण भय है। आज जो अणु-परीक्षण हो रहे हैं, वे भी भय के ही कारण शांति बनाये रखने के लिए हो रहे हैं, ताकि दुनिया में युद्ध न छिड़े, चाहे मनुष्य-मात्र रोगों का शिकार होकर मृत्यु को प्राप्त होता रहे! राष्ट्रीय व आन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों के अलावा व्यक्तिगत जीवन में आज मनुष्य को सतर्कता की आवश्यकता हो रही है। मुझे डर है कि आप मेरे नोट न गायब कर लें और आपको भी मुझसे ऐसा ही डर है। अब प्रश्न यह है कि भय का निरसन कैसे हो? इसके लिए यही उपाय है कि परिस्थिति ऐसी बना दो कि मनुष्य को सतर्क ही न रहना पड़े।

सर्वोदय में हम जीवन को चरम मूल्य मानते हैं। मत-भिन्नता के लिए सर्वोदय में गुंजाइश हो सकती है, परन्तु विरोधों के लिए नहीं। विरोधी आदर्श जीवन को काट देते हैं। विरोधों का परिहार और विशिष्टता का योग, यह हमारा आदर्श होना चाहिए। हमें आदर्श अपने सामने ऐसा रखना है, जो हमारी पहुँच में तो हो, लेकिन पकड़ में नहीं। जब आदर्श पकड़ में आ जाता है, तो वहाँ प्रगति रुक जाती है। जब आदर्श अंततः सुलभ होता है और बहुत कुछ प्रयत्नसाध्य होता है, तब ही पुरुषार्थ को प्रकट करने का अवसर मिलता है, वह हमारी शक्ति को बढ़ाने वाला होता है और प्रयत्न के लिए क्षेत्र खोलता है। जो आदर्श पहुँच में भी नहीं, पकड़ में भी नहीं, वह केवल युटोपिया है और वह अवैज्ञानिक भी होता है। इसलिए आदर्श ऐसा होना चाहिए कि जिसका आचरण आज मनुष्य नहीं कर सकता, परन्तु कल तो कर ही सकता है!

हमारा उद्देश्य भय को मिटाना है। इसलिए हमारी क्रांति के साधन भी ऐसे ही होंगे, जो भय का निरसन करते हों और सहजीवन और प्रेम का संचार करते हों। शासन का मूल आधार दण्ड है। इसलिए वह हमारा साधन नहीं हो सकता। प्रेरणा बंधुत्व की हो और हाथ में तलवार हो, यह हो नहीं सकता। साधन की यह कसौटी है कि जो क्रांति का अभिनेता है, उसका स्वयं का परिवर्तन हो चुका हो और वह जो साधन काम में लाता है, वह जन-साधारण के लिए भी व्यवहार्य हो तथा उसकी सांस्कृतिक भूमिका को विकसित करने वाला हो। साधन की सबसे उत्तम कसौटी यही है कि वह सांस्कृतिक भूमिका के अनुरूप हो और वह लोगों को आगे ही आगे बढ़ाता चला जाय।

आज पूँजीवाद बचाव की स्थिति में आ गया है, इसलिए उसका अंत निश्चित है। क्रांति के द्रष्टा को इस परिस्थिति का उपयोग करने के लिए जन-साधारण को उठाना व तैयार करना है। मार्क्स ने एक समय अमुक परिस्थिति में यह किया, अब नयी परिस्थितियों में गांधी और विनोबा उपयुक्त साधन और कार्यक्रम देकर आज वह कर रहे हैं। अब क्रान्ति ऐसी होगी, जिसमें साधारण नागरिक के पुरुषार्थ की आवश्यकता होगी। वह मजदूरों की क्रांति नहीं होगी, किसानों की क्रांति होगी। किसानों को क्रांति के अनुरूप ढालने का काम ग्रामदान के द्वारा आज विनोबा कर रहे हैं। ऐसा वातावरण तैयार हो चुका है कि बड़ी मालकियत स्वयं खतम होने जा रही है। वह जो थोड़ी-बहुत टिकी है, उसका भी मूल आधार छोटी मालकियत ही है! इसलिए विनोबा छोटे मालिकों को भी अपनी मालकियत फेंक कर इस क्रांति में अंतिम आहुति देने को तैयार कर रहे हैं। इसमें से क्रांति की ज्वाला अपने आप फूट पड़ेगी।

विनोबा किसानों से कह रहा है कि हे किसानो, तुम अपनी छोटी-छोटी मालकियत (हथकड़ियाँ) स्वयं झकझोर दो। कोई दूसरा तुम्हारी सम्पत्ति छीनने वाला नहीं है। तुम स्वयं इसे झकझोरोगे, तो तुम्हारा कल्याण होगा और क्रांति का मार्ग-प्रशस्त होगा, क्योंकि आगे चल कर तुम्हें क्रांतिकारी वर्ग की भूमिका अदा करनी है।*

* आबू के विचारकों के शिविर में किये गये भाषण का एक अंश, ता० १५-६-'५७

संत-परंपरा में भूदान-यज्ञ

(शिवाजी भावे)

महाराष्ट्र-संस्कृति का प्रारंभ करने वाले संत ज्ञानेश्वर, शांति-जलधि संत एकनाथ महाराज, स्वराज्य-संस्थापक शिवाजी के महान् गुरु समर्थ रामदास आदि संत इसी *जिले के हैं। यह संत-परंपरा यहाँ के भूदान-यज्ञ-कार्य के लिए आशीर्वाद-रूप ही है। जैनों और बौद्धों ने भी यहाँ धर्म-विहार किया और गुंफाएँ बाँधी। राष्ट्रकूट राजा कृष्णराय द्वारा निर्मित महान् कैलास गुंफाएँ भी यहीं हैं। ऐसे स्थान पर भूदान-यज्ञ का कार्य चल हो रहा है, यह एक असाधारण घटना है। सारा भविष्य-काल और यंत्रजर्जर पश्चिम भूदान की ओर आशा से देख रहा है। मीराबाई ने कहा है—"संतन संग बैठ-बैठ लोकलाज खोयी।" वैसे, लोकलज्जा छोड़ना लौकिक दृष्टि से अच्छी बात तो नहीं है, लेकिन जब वह परमेश्वर के साथ जोड़ दी जाती है, तो उसमें अलौकिकत्व आ जाता है। इसी तरह 'आग्रह' भी कोई अच्छी बात नहीं है, लेकिन गांधीजी ने उसे 'सत्य' के साथ जोड़ा और 'सत्याग्रह' दुनिया के लिए प्रकाश-स्तंभ, ज्ञानसूर्य बन गया। भूदान-कार्यकर्ताओं को लोकलज्जा तज कर सत्य का प्रचार करना होगा, लेकिन सत्य की अभिव्यक्ति का अधिकार सत्याचरणी का ही हो सकता है और सत्य भी हीरे के समान चमकता होना चाहिए। सत्य कैसे प्रकट करें इसका नमूना ज्ञानेश्वर महाराज हैं।

संत-संग के बिना सत्य की अभिव्यक्ति भी ठीक तरह से नहीं हो सकती। अभिव्यक्ति के तीन उस प्रकार हैं: (१) संत-परंपरा का भावनात्मक आविष्कार हृदय में करके वातावरण में सर्वत्र उसकी सुगंध फैला देना, (२) वैचारिक संत-संग—जैसे पुराने संतों के विचारों के साथ गांधी-विनोबा के विचारों का भी भजन-चिंतन हो और (३) जनता के बीच संत-संग साधना। -जनता में गुण और गुणवान बहुत हैं और छिपे हुए रतन भी बहुत हैं। उन सबका संग्रह करने की कला हमें सधनी चाहिए।

इस प्रकार भावना, विचार और कार्य की दृष्टि से हम संत-संग साध सकें, तो सत्य भी प्रकट कर सकेंगे और भूदान-यज्ञ को भी सफल बना सकेंगे। फिर भूमि का सवाल हल हुआ, तो दूसरे भी सवाल हल होंगे, अन्यथा नहीं। ऐसा यह सार्वभौम प्रश्न बन गया है। समय किसीकी राह नहीं देखते बैठता, बल्कि समय के पीछे रहने वाले को काल ही खा डालता है!

दादा गये, तो पोता मौजूद है!

मीराबाई ने कहा है—"मेरे तो गिरिधर गोपाल, दूसरा न कोई!" यही हमारा ध्येय है। इस दुनिया में किसी भी चीज पर हमारी मालकियत ही नहीं है। पूर्ण सत्य तो "मेरे गिरिधर गोपाल" ही हैं। आज दुनिया भर में मालकियत का संघर्ष बढ़ रहा है, पर मीराबाई के शब्दों में ऐसा मार्ग-दर्शन भरा है कि जिसके आधार से हम मालकियत का और साथ-साथ संघर्ष का लोप कर सकते हैं। भूमिहीनों को भूमि देना आंशिक सत्य है और पूर्ण सत्य है—मालकियत का संपूर्ण विसर्जन। तब शांति और क्रांति, दोनों एकत्र हो जाती हैं। कहा जाता है कि 'श्री' और 'सरस्वती' एकत्र नहीं रहतीं। लेकिन पढाई का प्रारंभ ही "श्री" "गणेशाय नमः" से हम करते हैं। इसी तरह शांति और क्रांति एकत्र रह सकें, ऐसी ही स्थिति हमें निर्माण करनी है। विनोबाजी को इस संत-भूमि से बहुत आशाएँ हैं। लोग कहते हैं—एकनाथ, ज्ञानेश्वर का समय चला गया। तो फिर इतने बड़े मेले ऐसे स्थानों पर क्यों होते हैं? समय तो जरूर चला गया है, लेकिन 'परिणाम' नहीं गया! दादा गये, लेकिन पोता तो मौजूद है!

भूदान का कार्य किसी भी प्रकार न रुके। रुकना सत्य के ही लिए बाधक होगा। निर्मलाबहन (देशपांडे) यहाँ कार्य कर रही हैं, यह बड़ी प्रसन्नता की बात है। इस जिले की जो महान् सांस्कृतिक परंपरा है, वह भूदान-यज्ञ के द्वारा फिर से प्रकट हो, यही सबकी अपेक्षा है।

ऋषि-मुनि तथा संत, ये ही हिंदुस्तान के वैभव हैं। संत-सज्जनों की अखण्ड वर्षा में से, संत-परंपरा की ऐतिहासिक शृंखला के क्रम में भूदान-यज्ञ का प्रारंभ हुआ है। वह कोई अनाहूत मेहमान नहीं है!†

*जिला औरंगाबाद दक्षिण, बंबई-राज्य। †पैठण (औरंगाबाद) के एक भाषण से

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

२६ जुलाअी सन् १९५७

लोकनागरी लिपि *

खतरे से सावधान !

(वीनोबा)

आज कुल दुनीया में वीद्यार्थीयों को अेक ढांचे में ढालने की प्रक्रीया चल रही है ! जीस वीचार की सरकार होगी, अुस वीचार के अनुकूल तालीम दी जाती है । अीस वास्ते कुल की कुल तालीम सरकार अपने हाथ में रखे, अैसी कोशीश दुनीया के बहुत सारे देशों में चल रही है । यह हालत बहुत खतरनाक है । अीससे बुद्धी का 'रजीमेंटेशन' (सांचा-बंदी) होती है । देश में जगह-जगह ज्ञानी, बुद्धीमान खड़े हैं, अपने-अपने स्वतंत्र प्रयोग वे कर रहे हैं, नये-नये वीचार अुनको अपनी प्रतीभा से सूझ रहे हैं, वे वीचार वीद्यार्थीयों को और समाज को वे दे रहे हैं और हरेक स्कूल की अलग तालीम सबको देखने मील रही है, तब वीकास हो सकता है । योजना अीसी तरह की होनी चाहीअे । पर आज तो यहां तक होता है की बील्डींग बनानी है, तो अुसका भी पैटर्न (नमूना) सरकार बनाती है, ताकी दूर से देखते ही पता चले की यही स्कूल है ! अीस तरह सारे-के-सारे दीमागों का यंत्रीकरण वे करना चाहते हैं । अीसलीअे शीक्षकों के अूपर बड़ी जीम्मेवारी है की वे अपना दीमाग सत्ता से और राजनैतीक पार्टीयों से अलग रखें ।

राजनैतीक पार्टीयों में तो बुद्धी की कीमत कम-से-कम है ! क्योंकी वहां हाथ अूपर करके काम होता है ! जहां हाथों की गीनती हो, वहां दीमाग का क्या काम ? अुनकी अेक 'पार्टी–डीसीप्लीन' भी होती है और पार्टी की तरफ से जो प्रस्ताव रखा जाता है, अुससे सहमत न होते हुअे भी सदस्य को अुसके अनुकूल हाथ अुठाना पड़ता है ! याने सुव्यवस्थीत असत्य की ही तालीम दी जाती है ! जो वीचार मुझे न जंचे, पार्टी की मीटींग में ही मैं अुसे रख सकता हूं ! लेकीन मेजॉरीटी ने जहां कोअी चीज़ स्वीकार कर ली की सर्वत्र हाथ अूंचा करना ही पड़ता है, नहीं तो पार्टी की डीसीप्लीनरी अैक्शन (अनुशासन-भंग की कार्रवाअी) चलेगी ! अीस तरह कुल की कुल डेमोक्रेसी बीलकुल यांत्रीक बनी है और अुसमें दीमाग को बीलकुल आजादी नहीं रही है । हर पार्टी की यही हालत है ! अीसलीअे शीक्षकों को पार्टीयों से अलग रहना चाहीअे । वे अपना दीमाग स्वतंत्र रखेंगे, तभी तो वे परीशुद्ध ज्ञान ग्रहण कर सकेंगे और दूसरों को अुसे दे सकेंगे ! तभी तो वे 'गातुवीत्'–Path Finder–सच्चे शीक्षक बन सकेंगे !

(रामनाटुकरा, कोलीकोड, ९-७)

* लिपि-संकेत : ि = ी; ी = ॏ, ख = ख़, संयुक्ताक्षर हलंत-चिह्न से।

सर्वोदय की दृष्टि :

स्व० नरहरि भाई परीख !

डॉ० भारतन् कुमारप्पा की अकाल और अनपेक्षित मृत्यु के बाद अब श्री नरहरि द्वारकादास परीख की मृत्यु का समाचार आया है। भारतन् कुमारप्पा 'गांधी-परिवार' के उन अप्रतिम रत्नों में से थे, जो अपनी कान्ति को भी अपने सहजप्राप्त शील में छिपाये रखते थे। वे विद्वान थे, लेखक थे और एक चिन्तनशील तत्त्व-विवेचक थे। परन्तु उनकी ऋजुता और नम्रता इतनी स्वाभाविक थी कि उनके इन गुणों का परिचय अनायास नहीं होता था। वे उग्र तपस्वी नहीं थे, फिर भी निष्कलंक चारित्र्य, निष्कपट-वृत्ति और निरंतर जागरुकता में उनकी बराबरी बहुत कम व्यक्ति कर सकेंगे। कुमारबंधु-जिनमें उनकी विदुषी भगिनी श्रीमती पाल अप्पास्वामी का भी समावेश है—इस देश के लिए भूषणभूत परिवारों में से एक है। भारतन्‌जी अपनी सौम्य, मधुर और अविचल निष्ठासंपन्न प्रकृति के कारण सबके स्नेहभाजन थे। इधर कुछ वर्षों से गांधी-वाङ्मय का संकलन, वर्गीकरण और संपादन वे बड़ी रसिकता और आस्था से कर रहे थे। उनकी आकस्मिक मृत्यु से वह काम अधूरा ही रह गया। विनोबा के 'स्वराज्य-शास्त्र' का उनका अंग्रेजी अनुवाद, अनुवाद-कला का एक सुन्दर नमूना है। उनकी 'Capitalism, socialism and Villagism' पुस्तक भी उपादेय और पठनीय है।

करीब दो बरस से श्री नरहरि भाई की हालत बहुत ही चिंताजनक रही। किस क्षण उनका देहान्त होगा, इसका कोई ठिकाना नहीं था। आखिर ता १५ जुलाई को उनकी शारीरिक पीड़ाओं का अन्त हुआ!

परन्तु साथ-साथ 'गांधी-परिवार' के एक अत्यन्त उज्ज्वल, सफल और कर्तृत्व-संपन्न जीवन का भी अन्त हुआ! गांधीजी के साथियों में विद्वान्, साहित्यिक और पंडित तथा कलावान् व्यक्ति अनेक थे। उनकी विद्वत्ता, साहित्य-सेवा, पांडित्य और कलाकृतियाँ समाज के लिए गर्व का विषय थीं। परन्तु उन सबकी विशेषता यह थी कि उनमें से एक भी 'केवल विद्वान्', 'सिर्फ साहित्यिक', 'निरा पंडित' या 'महज़ कलावान्' नहीं था। वे सब कुशल कर्मयोगी और पुरुषार्थवान् सेवक भी थे। इन्हीं प्रभूत प्रभावशाली दिग्गजों में से श्री नरहरि भाई भी एक थे।

गांधी-विचार की मीमांसा सुबोध और परिणामकारक भाषा में करने में वे सिद्धहस्त थे। विशेषकर आर्थिक प्रश्नों के विषय में उनका विवेचन बड़ा सूक्ष्म और सरल होता था। मुझ ऐसे जो लोग गुजराती नहीं जानते, वे भी उनकी मूल गुजराती पुस्तकें थोड़ी-सी कोशिश से समझ लेते थे। तरुण स्त्री के लिए आवश्यक विशिष्ट शरीरज्ञान, शिष्ट-वैज्ञानिक पद्धति से किस प्रकार दिया जा सकता, इसका अनुपम उदाहरण उनकी अपनी कन्या के लिए लिखी 'सयानी कन्या से' पुस्तक है।

साबरमती के 'हरिजन-आश्रम' के संचालक, सेवाग्राम के समग्र ग्रामसेवा विद्यालय के प्रथम आचार्य आदि के रूप में कई संस्थाओं में उन्होंने जो प्रत्यक्ष विधायक संगठनात्मक काम किया, उसका महत्त्व किसी कदर कम नहीं है। फिर भी अहमदाबाद के हिन्दू-मुसलमान दंगे के अवसर पर या गोलाबारी के अवसर पर उन्होंने जिस विनयपूर्ण वीरता का परिचय दिया, उसका स्मरण कई दिनों तक रहेगा।

व्यक्तिगत जीवन में उनकी सहृदयता और स्नेहालुता का अनुभव जिन्हें है, वे उनकी मैत्री को एक बड़ी नियामत मानते थे। हम उनको अपनी श्रद्धांजलि चढ़ाते हैं।

काशी, १८-७-'५७ —— —दादा धर्माधिकारी

अब मतभेद कहाँ रहे ?

(अशोक मेहता)

भूदान के बारे में पता नहीं, समाजवादी क्या राय रखते हैं; परंतु भूदान के सम्बन्ध में समाजवादी और सर्वोदयवादियों का जो भी मतभेद हो, लेकिन ग्रामदान एक ऐसी चीज है, जिसके बारे में समाजवादियों की दो रायें नहीं होनी चाहिए। बड़ा से बड़ा जो समाजवादी है, गांव के बारे में उसका जो चित्र है, उसमें और ग्रामदान में फर्क ही क्या है ? गाँव की सब जमीन गांव के लोगों की हो, गांव के सुख-दुख में सबका हिस्सा हो, गांव में छोटे-छोटे उद्योग-धन्धे हों, पढ़ाई का प्रबन्ध हो, सहकारी व्यवस्था हो, गाँव की सब चीजें हों, यही समाजवादी विचार है और यही बात ग्रामदान में से निकल रही है। औद्योगीकरण के बारे में समाजवादियों और सर्वोदयवादियों में मतभेद हो सकता है, लेकिन ग्रामदान के बारे में नहीं। अतः यह काम सही माने में समाजवादी है। जयप्रकाशजी आज जो हमसे कुछ दूर चले गये हैं, जिनके बारे में हम चाहते हैं कि वे आवें और हमारा नेतृत्व करें, यह काम उठा लेने पर वे हमारे नजदीक भी चले आवेंगे। नजदीक ही नहीं, बल्कि पहले से भी नजदीक चले आयेंगे और उनका नेतृत्व हमें सहज में ही प्राप्त हो जायगा।

www.vinoba.in

पंचामृत

गांधी : पश्चिम का भी प्रकाश-स्तंभ !

गांधी पश्चिम को भारत की बहुत ही महत्त्वपूर्ण देन है। उनका जीवन-क्रम हमारे बहुत से दोषों के निवारण के लिए रामबाण औषध है। भविष्य-द्रष्टा की भाँति फैसिस्ट (अधिनायकवादी) तथा लोकतंत्रवादी, दोनों प्रकार की व्यवस्था के अंतर्गत रहने वाले देशों के निवासियों की वास्तविक स्थिति का परिज्ञान प्राप्त करने के बाद गांधी इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि मानव की मानवता का सर्वत्र एक रूप से ह्रास हो रहा है।

अधिनायकवाद-चाहे वह बोल्शेविक ढंग का हो या अन्य किसी प्रकार का, ऐसा तंत्र है, जिसमें देश तो प्रबल होता है, किंतु देश का निवासी व्यक्ति दुर्बलतम और शक्तिहीन हो जाता है। बहुत-कुछ यही बात लोकतंत्रात्मक व्यवस्था वाले देश में भी हो जाती है, जहाँ सरकार का कार्यक्षेत्र बढ़ता जाता है तथा अर्थ-व्यवस्था कुछ ही संस्थाओं के हाथ में केंद्रित होती जाती है। ऐसी अवस्था में व्यक्ति को विवश होकर ऐसी संस्थाओं पर निर्भर होना पड़ता है, जो अंशतः उसके नियंत्रण, बल्कि कल्पना के परे होती है।

बीसवीं शताब्दी की सभ्यता के अंतर्गत एक ओर तो यह व्यवस्था चल पड़ी और दूसरी ओर युद्धोत्तर कालीन आंतर्राष्ट्रीय तनातनी की स्थिति ने सैन्यशक्ति की आवश्यकता में वृद्धि कर दी, जिससे राज्य और भी शक्तिशाली हो गया तथा व्यक्ति परस्पर-संदेह और अविश्वास का भाजन हुआ। इससे व्यक्ति-स्वातंत्र्य और भी कम हुआ।

कम्युनिस्ट और गैरकम्युनिस्ट देशों की स्थिति में जो अंतर है, उससे बहुत से लोग परिचित हैं। किन्तु दोनों में जो समानताएँ हैं, उनके खतरे से बहुत से लोग अपरिचित हैं। अनुशासन और एकरूपता के प्रति आग्रह तथा राष्ट्रीय हित और सुरक्षा के लिए वैयक्तिक स्वातंत्र्य की बलि ऐसी बात में है, जो लोकतंत्र की नींव को खोखली कर रही है।

सोवियत तंत्र और लोकतंत्र !

सोवियत ढंग की अधिनायक-व्यवस्था के विरुद्ध सबसे बड़ा दोषारोप यह है कि उसमें निजी संपत्ति राज्य के हाथ में चली जाती है और तब व्यक्ति भी राज्य की संपत्ति समझा जाने लगता है ! इस स्थिति में उसकी स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है। परंतु अब यह स्पष्ट होता जा रहा है कि पूँजीवादी देश में भी, जहाँ निजी संपत्ति सुरक्षित मानी जाती है, व्यक्ति का दमन हो सकता है। बहुमत की शासन-व्यवस्था वाले देश में यदि अल्पमत-समुदाय के प्रति उदार भावना न हो, तो वहाँ भी व्यक्ति-स्वातंत्र्य का दमन उसी प्रकार होता है, जिस प्रकार अधिनायकवादी देशों में। जैसा कि कुछ लोगों ने कहा है, जब लोकतंत्र अधिनायकवाद के विरुद्ध कमर कस कर खड़ा होता है और उसीके (अधिनायकवाद के) शस्त्रों का प्रयोग उसके विनाश के लिए करने लगता है, तब वह स्वयं अधिनायकवादी स्वरूप ग्रहण कर लेता है। व्यक्ति को इससे क्या लाभ होता है ? सुरक्षा के नियम, निरंतर की पूछताछ, जाँच-पड़ताल और तहकीकात चाहे-वह किसीके द्वारा की जाय, व्यक्ति-स्वातंत्र्य के नियंत्रण के ऐसे साधन हैं, जो रूस और चीन जैसे देशों में किये जाने वाले इस प्रकार के कार्यों से, लोकतंत्र वाले देशों में भिन्न नहीं होते, भले ही उनमें उतनी कड़ाई न हो। अपनी स्वतंत्र सैद्धांतिक मान्यताओं के कारण किसीका कहीं धंधा न पा सकना या उसके धंधे का छिन जाना या छिन जाने का भय बराबर बना रहना, उसकी स्वतंत्रता के लिए ठीक वैसे ही अभिशाप-सा है, जैसा कि रूस में गिरफ्तार हो जाने का निरंतर भय।

ऐसी दशा में साधन की शुद्धता के प्रति आग्रह तथा व्यक्ति-स्वातंत्र्य के प्रति प्रेम की अपनी भावना के कारण महात्मा गांधी हमारे लिए प्रकाश-स्तंभ के समान हैं। व्यक्ति की स्वतंत्रता के प्रति गांधीजी का आग्रह सर्वाधिक था और इस आग्रह ने ही बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध की अनेक समस्याओं के निराकरण के लिए उनके सिद्धांतों की सार्थकता प्रकट की है। इस बीसवीं शताब्दी में व्यक्ति के स्वातंत्र्य पर जो प्रहार हो रहा है और जिससे उसका मानसिक संतुलन ठीक नहीं रह पाता है, उसके लिए गांधी ने कुछ उपाय बताये हैं।

मानसिक संतुलन ठीक रखने के लिए गांधी ने सत्य का आश्रय लेने का सुझाव दिया है। मन-वचन और कर्म की एकरूपता गांधी के जीवन का लक्ष्य था। इन तीनों की एकरूपता ही सत्य है। जब मान्यता से वचन भिन्न हो और वचन से कार्य भिन्न हो, तब मनुष्य सत्य से परे हो जाता है ! गांधी ने जिस पर आचरण किया, उसीका उपदेश किया और वही आचरण किया, जिसे वे मानते थे। अनेक प्रकार की चिंताओं और जिम्मेदारियों के बावजूद, मैंने देखा कि, गांधीजी स्वस्थ, प्रसन्न और मुक्त हृदय के व्यक्ति थे और यह इसीलिए कि वे आंतरिक शांति का अनुभव करते थे।

मानव को जनता-जनार्दन के रूप में देखने की अपनी प्रवृत्ति के कारण ही वे अपने अंदर विचारों का विकास कर सके। उन्होंने व्यक्ति को भारतीय या फ्रांसीसी या ईसाई या मुसलमान के रूप में कभी नहीं देखा। वे मानव को इतना पवित्र और इतना महत्त्वपूर्ण मानते थे कि उनकी दृष्टि में वह अदृश्य राज्यसत्ता का केवल अंग ही नहीं है।

('दिस इज अवर वर्ल्ड' से) ——— —लुई फिशर

रसेल का संदेश

पारमाणविक विस्फोटों से जो संकटपूर्ण स्थिति उत्पन्न होती है, उसे देख कर यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक स्फोट मानव-समाज के प्रति बहुत बड़ा अपराध है। यह कहना बहुत ही मूर्खतापूर्ण है कि पारमाणविक अस्त्र रख कर कोई देश सुरक्षित रह सकता है।

शस्त्रीकरण के भरोसे सुरक्षा की बात करना आज तो पहले से भी अधिक मृग-मरीचिका के पीछे दौड़ने जैसा है। जो भी हो, सुरक्षा के लिए ऐसे घृणित साधनों के पीछे दौड़ना अपराध ही नहीं, मूर्खता भी है। अतः मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि जनमत संसार भर की सरकारों को इस बात के लिए बाध्य करेगा कि वे शस्त्रसंग्रह और पारमाणविक विस्फोट जैसे पागलपन से भरे गर्हित कार्यों से विरत हों।

—बर्ट्रंड रसेल

सोना और खून !

सोने का रंग पीला होता है और खून का रंग सुर्ख, पर तासीर दोनों की एक ही है। खून मनुष्य की रगों में बहता है और सोना उसके ऊपर लदा हुआ है। खून मनुष्य को जीवन देता है और सोना उसके जीवन पर खतरा लाता है। पर आज के मनुष्य का खून पर मोह नहीं है, सोने पर है। वह एक-एक रत्ती सोने के लिए अपने शरीर का एक-एक बूँद खून बहाने को आमादा है। जीवन को सजाने के लिए वह सोना चाहता है; और उसके लिए खून बहा कर वह जीवन को खतरे में डालता है। आज के सभ्य संसार का यह सबसे बड़ा कारोबार है। आज सबसे बड़ा लेन-देन है, खून देना और सोना लेना !

इस नये युग का नया खूनी देवता है, देश ! इस देवता ने इस सभ्य युग में जन्म लेकर दुनिया के सब देवताओं को पीछे धकेल दिया। आज वह संसार के मनुष्यों का सबसे बड़ा देवता है। असभ्य युग में असभ्य जातियों ने कभी भी किसी देवता को इतनी नर-बलि नहीं दी थी, जितनी कि इस सभ्य युग में इस खूनी और हत्यारे देवता को मनुष्य ने दी है और देता ही जा रहा है ! इस भयानक देवता के खून की प्यास का अन्त नहीं है। बलिदान की पुरानी तलवार के स्थान पर, मनुष्य ने अपना सारा बुद्धि-बल खर्च करके एक से एक बढ़कर खूनी हथियार इस देवता को नर-बलि से सन्तुष्ट करने को बनाये हैं। रोज-रोज एक मनुष्य का ताज़ा रक्त इस देवता को चाहिए। जो सबसे अधिक नर-वध कर सकता है, वही सबसे अधिक इस देवता का वरदान प्राप्त कर सकता है। यह हत्यारा देवता शायद संसार के सारे नृवंश को खा जायगा। एक भी आदमी के बच्चे को जीता न छोड़ेगा !

खून से सींचा हुआ राष्ट्रवाद दुनिया के मनुष्यों को कंगाल और तबाह करने के लिए अब भी कायम है और वह समूचे नृवंश को खींच कर भावी महायुद्ध की रंगभूमि पर लिये जा रहा है, जहाँ अब सोने के कुंड खून से न भरे जायेंगे, खून और सोना पिघल कर एक नयी धातु को जन्म देंगे, संसार के सारे नगर, जन-पद विध्वस्त हो जायेंगे, संसार का सारा जीवन समाप्त हो जायगा। रह जायेंगे इस नयी धातु के बने असंख्य पर्वतों के शृंग, जिनका रंग लाल और पीले रंग का मिश्रण होगा; और जो सूने संसार में सूर्य की धूप में व्यर्थ चमकते रहेंगे। जिन्हें देखने वाली सब आँखें फूट चुकी होंगी, समझने वाले सब हृदय जल कर खाक हो चुके होंगे, सब जीव अपने को नष्ट करके जीवन का मूल्य चुका दिये होंगे।

यही सोना और खून का सम्मिलित रूप होगा, जो आज मिल कर एक होने को बेचैन है। खून मनुष्य की रगों में बह रहा है और सोना उसके शरीर पर लदा हुआ है ! जब तक ये नसें चीर कर साफ नहीं कर दी जातीं, खून की एक-एक बूँद उनमें से बाहर नहीं निकाल ली जाती, तब तक सोने को चैन कहाँ ?

('धर्मयुग' से) ——— —आचार्य चतुरसेन शास्त्री

www.vinoba.in

संसार को विनाश से बचायें

प्रकृति का यह नियम है कि सूखे के बाद हरियाली और हरियाली के बाद सूखे का आगमन होता रहता है। सूखा विनाश है और हरियाली पुनर्जीवन। पुनर्जीवन में ताजगी, स्फूर्ति और अभ्युदय की प्रेरणा रहती है, इसलिए मानव प्रकृत्या इसकी कामना करता है। यही कारण है कि सृष्टि के आदिकाल से ही वह इस प्रकार के समारोहों का आयोजन करता आया है। संसार का कोई देश हो, किसी जाति-धर्म या सम्प्रदाय के लोग हों, इस प्रकार की भावना और तदनुकूल आचरण हम सर्वत्र पाते हैं। यदि आज का मानव अपने अविवेक से इस प्राकृतिक नियम को समाप्त कर देने के लिए ही कदम उठाता है, तो उसका क्या उपाय है?

यदि बड़े राष्ट्र अधिक से अधिक और उत्तरोत्तर विशेष संहारक पारमाणविक अस्त्र अपने पास संग्रह करते जायँ तथा अपनी इस मान्यता पर ही कायम रहें कि इन अस्त्रों का संग्रह करके ही युद्ध रोका जा सकता है, तो वह दिन दूर नहीं, जब कि यह हरीभरी दुनिया श्मशान में परिणत हो जायगी तथा जल-जन्तुविहीन सागर की लहरें निर्जन भूमि से टकरा कर लौट जाया करेंगी।

युद्धों में विजय प्राप्त करने के लिए न जाने कितने त्याग एवं बलिदान किये गये हैं, न जाने कितने वीरत्व के कार्य हुए हैं और न जाने कितने निःस्वार्थ कर्म हुए हैं! इसका कारण यह है कि युद्ध में कूदने वालों के पास इन गुणों का होना अनिवार्य है। किन्तु इसके साथ ही युद्ध में कूदने वालों ने अमानवीय अत्याचारों की भी पराकाष्ठा कर दी है। फिर भी आज की भाँति ऐसी घड़ी कभी न आयी, जब कि युद्ध के कारण समूचे मानव-समाज के विनाश का खतरा पैदा हो गया हो।

और आज तो उदजन बमों ने इसकी आशंका पैदा कर दी है। यह सोचना ही मूर्खतापूर्ण और मानव-जीवन के साथ खिलवाड़ करने जैसा है कि उदजन बमों से होने वाले विनाश से घबरा कर या डर कर सरकारें इनका विस्फोट या संग्रह बन्द कर देंगी। प्राणी-मात्र नश्वर है। हम सबका एक न एक दिन अन्त होने वाला है, किन्तु प्रकृति में बार-बार आने वाली हरियाली इस बात की बराबर सूचना देती रहती है कि मानव समाज चलता रहेगा।

वस्तुतः मृत्यु नाम की कोई चीज है ही नहीं। कम से कम ऐसा हम मानते हैं। सभी धर्मों ने हमें यही बताया है। जो लोग आत्मा की अनश्वरता में विश्वास नहीं करते, उनके सामने भी समय-समय पर आने वाली प्रकृति की हरियाली अथवा पुनर्जीवन इस बात का प्रमाण है कि जीवन में नव-चेतना आती रहती है। यह एक विचित्र बात है कि जीवन की शाश्वत सत्यता और प्रकृति की बार-बार की हरियाली को विनष्ट कर डालने की क्षमता रखने वाले अस्त्र ईसा की शिक्षाओं को सम्बल मानने वाले देशों के निवासियों के हाथों में आ पड़े हैं!

यह कहना कि रूसवाले ईसाई नहीं हैं और उन्होंने ही इस प्रकार हथियारों का अधिकाधिक संग्रह कर रखा है, उनके ही कारण ईसाई देश इससे विरत नहीं होते, व्यर्थ-सा है, क्योंकि हिरोशिमा और नागासाकी को रूसवालों ने तो नहीं नष्ट किया! इन सर्वसंहारकारी अस्त्रों का प्रथम प्रयोग करने की जिम्मेदारी ईसाई देशों की है। संसार की रक्षा तभी संभव है, जब लोग अपनी करनी पर पश्चात्ताप करें तथा जिन देशों के पास उदजन बम हैं, उनके निवासी अपने नेताओं पर जोर डालें कि वे विनाशकारी पारमाणविक अस्त्रों की शक्ति पर भरोसा न कर मानव की सद्भावना, प्रेम और दयालुता की शक्ति पर भरोसा करें।

कोई भी स्थिति हो, यह हमारा कर्तव्य है कि हम संसार को, मानव को एवं प्रकृति की सारी हरियाली को विनष्ट होने से बचाने के लिए बद्धपरिकर हो जायँ।

('पीस न्यूज़' से) —सीबिल मॉरिसन

संसार का भविष्य युवकों के हाथों में

शांति आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है। पिछले साठ वर्षों से, जब से विश्वयुद्ध किसी-न-किसी रूप में शुरू हुए, मनुष्य बराबर यह कहता आ रहा है कि हमें युद्ध से विरत हो ही जाना चाहिए, अन्यथा ये युद्ध हम ही को खा जायेंगे।

खैर! वह समय अब आ गया है। अब इस सिलसिले का खात्मा हो रहा है। अब आगे युद्ध का जो स्वरूप होगा, उसमें एक ओर युद्ध और दूसरी ओर शान्ति ही की बात न रह जायगी, बल्कि प्रश्न यह उपस्थित हो जायगा कि मनुष्य-समाज को जीवित रहना है अथवा अपना अस्तित्व ही उसे समाप्त कर देना है! युवकों के सामने भविष्य का हम कौनसा नक्शा पेश करना चाहते हैं? युवक होने का अर्थ है—उत्साह और उमंग से परिपूर्ण होना। युवक के सामने अपना भावी दांपत्य-जीवन, संतान, अच्छी रोजी, रुचि-विशेष आदि के प्रति बड़ी उत्कंठा रहती है। कुछ ही दिनों बाद दांपत्य-जीवन में व्यवस्थित होने पर आज का युवक गृहस्थी और संतति-प्रजनन की ओर प्रवृत्त होने लगता है। इसीलिए कि सृष्टि का चक्र निरंतर घूमता रहे। लेकिन यह भी हो सकता है कि संतति-प्रजनन-कार्य में लगने के पूर्व उन्हें चिकित्सक से परामर्श करना पड़े कि यदि उनमें रेडियो-सक्रियता का बाहुल्य हो, तो संतान-उत्पत्ति का खतरा वे क्यों उठायें?

अवसर दिया जाय, तो युवक हमारी रक्षा कर सकते हैं—संसार के विनष्ट हो जाने का खतरे से नहीं, वरन् नैतिक पतन की अवस्था से भी। अमेरिका के पारमाणविक क्षेप्यास्त्र केन्द्र का संचालक मुश्किल से ३०-३२ वर्ष का है और कितने ही बड़े-बड़े इंजीनियर २०-२२ वर्षों के हैं। आप ही बताइये, १० वर्ष पूर्व उनको किस प्रकार की शिक्षा, किस प्रकार की दीक्षा मिली होगी?

आज जो विश्वविद्यालयों में पढ़ रहे हैं, ये ही कल 'हार्वेल' में या लोकसभा में पहुँचेंगे! बताइये, इनको आज दुनिया के बारे में क्या ज्ञान प्राप्त हो रहा है?

उनको उत्साह की जरूरत है, अपनी प्रशंसा सुनने की लालसा है, साहस के कार्य की ओर प्रवृत्त किये जाने की आकांक्षा है। लेकिन उन्हें यह प्राप्त कहाँ हो? राजनीतिज्ञ से तो स्वप्न में भी इसकी आशा नहीं। वह अपने ही फेर में पड़ा रहता है। तो फिर क्या चर्च से मिले? वहाँ भी नहीं! क्योंकि वहाँ धोखाधड़ी का बाजार गर्म रहता है।

एक ही जगह है, जहाँ उनको पिछले दस वर्षों से उत्साह की प्राप्ति होती रही है और वह है, सैन्य-संगठन का भर्ती वाला विभाग! वहाँ तो उनसे कहा जाता है कि "कुछ बनना हो, तो सेना में भर्ती हो जाओ। देखो, विमान-सेना की नौकरी से कितनी तरक्की होती है! पारमाणविक इंजीनियरिंग ही तो आज उन्नति का एक-मात्र साधन है!" यही एक क्षेत्र है, जहाँ यात्रा का, अच्छे संपर्क का अवसर मिलता है; इतना ही नहीं, "हम कुछ कर रहे हैं", यह भाव भी मन में आता है! ऐसी स्थिति में क्या हम युवकों को इन लुभावने वाक्यों का शिकार बन जाने पर दोष दे सकते हैं? यह तो प्रचार का अद्भुत कौशल है!

एक बात हमें जरूर समझ लेनी चाहिए कि युवक कुछ-न-कुछ महात्वाकांक्षी होते ही हैं। किसी बात का विरोध करना तो समझ में आता है, किंतु इसी प्रकार की अपनी प्रकृति बना लेना ठीक नहीं। इससे मन में बराबर उद्वेग बना रहता है। बुरी बात का विरोधी होना तो इसलिए ठीक है कि आप अच्छी बात की ओर प्रवृत्त हों, क्योंकि अच्छी बातें ही जीवन में महत्त्व रखती हैं। अतः अब यह अवसर आ गया है कि हम युवकों को सिखायें कि वे भी जीवन में कुछ हो सकते हैं। पश्चिमी योरोप इस समय बहुत बड़े परिवर्तन की अवस्था से गुजर रहा है। पुराने साम्राज्य टूट रहे हैं। अब तो हमारे जीवन-निर्वाह की ही समस्या अत्यंत जटिल हो गयी है।

और ऐसी अवस्था में लोगों की आवश्यकताएँ भी बहुत बढ़ गयी हैं। लाखों-करोड़ों लोग खंडहरों और गंदी बस्तियों से निकल कर बाहर आ रहे हैं। लोगों की रुचि बदल रही है, उनके स्वार्थ भी बढ़ रहे हैं। बच्चे छुट्टियाँ ज्यादा चाहते हैं, और नवविवाहित व्यक्ति सुखमय जीवन की आकांक्षा रखते हैं। लेकिन इससे भी बढ़ कर बात यह है कि संतोष भी जीवन में चाहते हैं। वे भले ही इसको न समझते हों, भले ही इससे वे भयभीत भी होते हों, लेकिन तथ्य यह है कि युवक के जीवन की सबसे बड़ी आकांक्षा स्वतंत्रता, सौंदर्य के प्रति प्रेम और उपयोगिता होती है।

कारखानों में होने वाली हड़तालें इस बात की ही सूचक नहीं हैं कि कर्मचारी दबाव डाल कर वेतनवृद्धि ही करवाना चाहते हैं, बल्कि ऐसा कहिये कि प्रत्येक कर्मचारी के मन में निराशा की जो भावना रहती है, उसकी भी अभिव्यक्ति इन हड़तालों के माध्यम से होती है। आज के समाज का जो स्वरूप बन गया है और जिसके चलते यह बात विस्मृत कर दी गयी है कि समाज एक-एक मनुष्य से बना है, उसके प्रति विरोध-भावना की अभिव्यक्ति इन हड़तालों से होती है। यह जान लेना चाहिए कि एक-एक पुरुष, स्त्री-बच्चे, युवक, प्रौढ़, वृद्ध के समूह का नाम ही समाज है और सरकार चाहे इसे माने या न माने, एक-एक मानव ही वस्तुतः विचारणीय है।

आज नहीं तो कल विस्फोट होगा ही, दमन और अन्याय समाप्त होकर रहेंगे। लेकिन इसका उपाय क्या है? कुछ लोग कहते हैं कि युद्ध होने पर यह सब खतम हो जायगा, किन्तु इस उद्देश्य से बहुत बार युद्ध हो चुके हैं और आगे भी उनके किये कुछ नहीं होगा।

www.vinoba.in

इसके प्रतिकूल शांति के लिए दृढ़तापूर्वक प्रयत्न करने में इसकी समाप्ति संभव है। सच बात यह है कि शांति के लिए बहुत ही प्रयास की आवश्यकता है तथा उसके लिए जम कर काम करने की जरूरत है। एक बार भी यदि भय और संदेह का वातावरण दूर हो जाय, तो शांति की असीम संभावनाएँ सामने आने लगती हैं। जिस सुख-शांतिपूर्ण संसार की कल्पना हमारे पूर्वजों ने की थी, वह कल्पना का विषय न रह कर सत्य का स्वरूप धारण कर लेगा!

जीवन के कलात्मक पक्ष के संबंध में हमारा जो कुछ परिज्ञान है, उसके आधार पर हम यही कह सकते हैं यदि उसको ठीक-ठीक व्यवहार में लाया जाय, तो यह संसार अभिशप्तावस्था से ही मुक्त न हो जायगा, वरन् जिस समाज की सृष्टि होगी, उसमें लोग मानव की भाँति रहने लगेंगे। मनोविज्ञानवेत्ता जिस मुक्त व्यक्तित्व की कल्पना करता है, धर्मोपदेशक जिस आध्यात्मिक स्वरूपवाले व्यक्तित्व के लिए उपदेश करता है तथा समाज-सुधारक जिस सुखी अभावमुक्त समाज के सपने देखा करता है, वे सब क्षण-मात्र में हम सत्य कर सकते हैं। आवश्यकता केवल इतनी ही है कि हम उसके लिए प्रयत्नशील हों। मनुष्य की काया धारण कर हम पूर्ण तो नहीं हो सकते, किन्तु यह अवश्य है कि सारी अपूर्णताओं के बावजूद हम चाहें, तो वे विवेकपूर्वक, नम्रतापूर्वक और बुद्धिपूर्वक रह सकते हैं।

किन्तु इस प्रकार का जीवन बिताने में बाधा क्या है? एक शब्द में इसका उत्तर है, भय की भावना। यह जान लेना चाहिए कि भय का भाव मन में आते ही मनुष्य की सारी क्रियाशीलता नष्ट हो जाती है। यदि हम भय के वशीभूत होकर आज की ही भाँति पारमाणविक अस्त्रों का संग्रह करते जायँ और अपने स्वघोषित विरोधी के सामने उन अस्त्रों का भरोसा करके डींग मारते जायँ, तो उससे कोई लाभ नहीं हो सकता।

शान्ति का एक ही मार्ग है—उसके लिए दृढ़तापूर्वक प्रयत्न करना। हम आज चल तो रहे हैं युद्ध के मार्ग पर, किन्तु चाहते हैं शान्ति। यह क्या कभी सम्भव है? न आज तक यह हुआ और न आगे होने वाला है। आशा का एक ही सम्बल है। सैनिक भर्ती के अभियान की गति बहुत कुछ मन्द हो चली है। सेना के प्रति अब लोगों के मन में वह आकर्षण नहीं रह गया है। सारा खिंचाव खतम हो चला है! प्रश्न है कि अब क्या होगा? मेरा कहना यही है कि यदि शांति-आंदोलन ठीक ढंग से चलाया जाय, तो युवकों को आकृष्ट करने में यह विफल न होगा। वे उत्साह से यह काम अपने हाथ में ले लेंगे।

सदा ही संसार के नवनिर्माण की आवश्यकता रही है, किन्तु आज जैसी आवश्यकता पहले कभी नहीं रही है और न पहले यह कार्य इतना सरल ही था। लेकिन संसार के नवनिर्माण के पूर्व हमें युद्ध से तो पिण्ड छुड़ा ही लेना होगा।

('पीस न्यूज़' से) —टाम वार्डल

सेवाग्राम में नयी तालीम की अध्ययन-गोष्ठी

(विमलाबहन)

सेवाग्राम में नयी तालीमी संघ की ओर से जुलाई के पहले हफ्ते में जो अध्ययन-गोष्ठी हुई, वह बहुत महत्त्वपूर्ण रही। नयी तालीम को ग्रामदान और ग्रामराज के संदर्भ में किस तरह अमल में लाया जाय, यह विचार शुरू से ही चल रहा था। उस संबंध में नयी तालीमी-संघ ने एक प्रस्ताव भी स्वीकृत किया। प्रस्तुत सेमिनार उसी दिशा में एक अमली कदम था। जो चर्चाएँ और भाषण वहाँ हुए हैं, उनमें से कुछ भाषणों का सार यहाँ देना उपयुक्त होगा।

सब लोगों का स्वागत करते हुए श्री आशादीदी ने, बारिश के कारण लोगों को होने वाली तकलीफ के लिए पहले क्षमा-याचना की। ग्रामदान और नयी तालीम के संबंधों का जिक्र करते हुए फिर कहा: "ग्रामदान से नयी तालीम का दरवाजा ही खुल गया है। हम चाहते थे कि बाबा के सामने यह गोष्ठी हो, लेकिन उन्होंने कहा कि हमारा सारा ध्यान अभी ग्रामदान की ओर ही लगा हुआ है और यदि यहाँ गोष्ठी होती है, तो हमारा ध्यान उधर बँट जायगा। इसलिए यह आयोजन बाबा के सामने नहीं हो सका। बापू ने जेल से आने के बाद सन् '४५ में नयी तालीम का उद्घाटन किया था। हम अपने उस लक्ष्य तक तो अभी नहीं पहुँचे हैं, लेकिन हम जा उधर ही रहे हैं, वही लक्ष्य हमारा शाश्वत ध्रुवतारा है।"

गोष्ठी के उद्घाटन-भाषण में पू० काका साहब ने, गुजरात विद्यापीठ में बापू ने जो सिद्धांत बताये थे, उनका जिक्र करते हुए कहा कि "बापू ने मुख्यतः दो-तीन बातें हमारे सामने रखीं: (१) धन-जन-बुद्धि-शक्ति राष्ट्रसेवा में लगायी जाय, (२) प्रचलित अर्थशास्त्र बदल दिया जाय और आर्थिक, सामाजिक आदि सर्वांगीण दृष्टि ग्रहण की जाय और (३) अध्ययनक्रम न तो दुनिया के प्रचलित अभ्यास-क्रम के अनुसार ही तैयार हो, न हमारे प्राचीन ग्रंथों के ही आधार पर। वह तो प्रत्यक्ष अनुभव के और परिस्थिति के आधार पर ही बने।

"इस दिशा में हम लोगों ने कुछ काम किया और गुजरात विद्यापीठ का रूप सामने आया। उसके बाद नयी तालीमी-संघ की स्थापना हुई। अब लक्ष्य, कार्य और जिम्मेवारी बढ़ गयी है। अतः इस नये गुजरात विद्यापीठ का अर्थात् नयी तालीमी-संघ का यह कार्य होगा कि देश की जो मांग है, उसकी पूर्ति करें, जीवनदानी राष्ट्र-सेवक निर्माण करें और समाज में स्वतंत्र-वृत्ति का विकास करें। हमको मानव-संस्कृति के आधार पर गाँव का पुनर्निर्माण करना है और वही हमारा लक्ष्य है। आज के ग्रामदानी गाँव भी शहरों के अनुयायी हैं। योजनाएँ भी आज उस पुराने ढाँचे के आधार पर ही बनती हैं। लेकिन हमारी क्रांति का आधार ग्राम है और यही क्रांति विश्व के बुराइयों का इलाज है। आज एक संत की प्रेरणा के ही कारण ऐसा मौका मिला है कि ग्रामों का विकास ग्रामों की दृष्टि से हो।"

जाति-प्रथा के बारे में अपनी वेदना प्रगट करते हुए उन्होंने कहा कि "आज वह समाज के लिए कोढ़ बन गयी है, इसलिए हमको कुटुम्ब-धर्म की स्थापना करनी ही होगी। वस्तुतः वह धर्म ही नहीं है, जो कुटुम्ब में दाखिल नहीं होता और उसका विकास नहीं करता।"

शिक्षाशास्त्र जीवनशास्त्र ही है, यह बताते हुए उन्होंने कहा कि "ज्ञानगोष्ठी का आधार शुद्ध जीवन का स्पष्ट चित्र होता है। हमको ऐसा स्पष्ट चित्र सामने रख कर चलना है। सीलोन में मुझसे पूछा गया—दो लफ्जों में ग्रामदान का अर्थ बताइये। मैंने कहा, 'सारे समाज को कुटुम्ब बनाने की प्रक्रिया का ही नाम ग्रामदान है।' इस तरह भगवान् ने ग्रामदान द्वारा शिक्षा का स्रोत ही चालू कर दिया है। यह नयी तालीम की प्रयोगशाला ही है।"

श्री शंकररावजी ने साधन-साध्य-विवेक के संबंध में बड़ा प्रेरक भाषण दिया। उन्होंने बताया ग्रामराज हमारा साध्य है और उसका समानार्थी शब्द अहिंसक समाज ही है, इसलिए अहिंसक तरीके से ही वह प्राप्त किया जा सकता है।

"गांधीजी ने कहा था: 'जमींदार स्वेच्छा से भूमि-अधिकार छोड़ देंगे।' लोगों के मानसरोवर में जो समर्पण की इच्छा थी, उसे ही विनोबाजी ने रूप दे दिया और भगीरथ का काम करके भूदान-गंगा को अवतरित किया।"

श्री शंकररावजी ने एक बात की ओर विशेष रूप से ध्यान दिलाया कि "नेतृत्व के साथ सेवकत्व का भी विसर्जन करना चाहिए, क्योंकि ये एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। शासन-निरपेक्ष समाज की पहली शर्त है, व्यवस्थापक-पद को ही हटा दिया जाय, जो नेता के साथ-साथ सेवक के रूप में भी चला आता है!"

श्री शंकररावजी ने आजादी की व्याख्या करते हुए बताया कि "विचार, चिंतन, क्रिया, इन सबमें मनुष्य का अभिक्रम कायम रहे। वही सच्ची आजादी है। ग्रामसंकल्प, स्वदेशी धर्म और संत-संस्कृति के समन्वय से ही ग्रामराज आयेगा।"

श्री शंकररावजी ने अपने दूसरे भाषण में नयी तालीम का रूप स्पष्ट करते हुए बताया कि "अहिंसक क्रांति का माध्यम नयी तालीम ही हो सकती है। जहाँ ग्राम-संकल्प सर्वसम्मति से हुआ कि उसके बाद की रचना में से दबाव ही समाप्त हो जाता है और गाँव की सारी शक्ति रचना में लग जाती है। हमको तो सच्चा लोकराज्य कायम करना है। आज के लोकतंत्र में होता यह है कि पाँच साल में एक बार ही लोग विचार करते हैं और फिर विचारहीन बन जाते हैं। जहाँ मनुष्य विचार नहीं करता, वहाँ उसमें और पशु में फिर फरक ही क्या रह जाता है? अगर कार्यक्षमता और मानवीय मूल्यों के बीच हमें चुनाव करना हो, तो मानवीय मूल्यों का ही हमें चुनाव करना होगा। इस नये प्रजातंत्र की स्थापना में नयी तालीम ही कारगर हो सकती है।"

इन लोगों के अलावा श्री दादा धर्माधिकारीजी, डॉ. ज्ञानचंदजी, श्री अण्णासाहब सहस्रबुद्धे आदि के विचार-प्रेरक भाषण हुए, चर्चाएँ भी अच्छी हुईं।

…आदर्श लोकतंत्र में राज्य का कुछ या बिल्कुल स्थान नहीं होगा, क्योंकि व्यक्ति अपने मामलों को अपने पड़ोसियों के सहयोग से हल कर लेगा, तब सुविकसित राज्यहीनता आती है। ऐसी स्थिति में हरेक अपना शासक होता है। वह अपने ऊपर इस प्रकार से शासन करता है कि कभी भी अपने पड़ोसी के लिए बाधक न हो।

—भारतन् कुमारप्पा

---

www.vinoba.in

केरल की क्रांतियात्रा से–

(गोविंदन्)

कालड़ी-सर्वोदय-संमेलन के बाद विनोबाजी ने त्रिचूर जिले की यात्रा पूरी करके पालघाट जिले में प्रवेश किया। पालघाट पहुँचते ही ग्रामदान का प्रवाह यत्र-तत्र शुरू हुआ। कोरापुट जिले में जब वे घूमते थे, तब मुसलाधार वृष्टि के साथ ग्रामदान की भी वृष्टि होती थी। यही अनुभव आजकल केरल में थोड़ा आ रहा है।

पंचमहाभूतों से बने इस शरीर में त्रिदोष के कारण कई रोग होते रहते हैं और उन रोगों के निवारण के लिए आखिर पंचमहाभूतों की ही शरण लेनी पड़ती है। वैसे विनोबा भी बीमार पड़ गये। फिर भी बुखार को गौण समझ कर एक-एक कदम बढ़ाते-बढ़ाते १० मील चल कर पड़ाव पर पहुँचे। लेकिन इस बार कोलीकोड जिले में बुखार से एक कदम भी पैदल चलना मुश्किल हो गया, तब वे मोटर में बैठने के लिए राजी हो गये। अर्थात् यह कुछ ही दिन तक चलने वाल चीज है। किसी गाँव में कम-से-कम ३ दिन ठहराया जाय, इसे भी उन्होंने पसंद नहीं किया। पालघाट में वैद्य ने आकर कहा कि "आपको औषधि लेना चाहिए और कुछ दिन कहीं आराम लेना चाहिए", उन्होंने उनको "चरैवेति चरैवेति" मंत्र ही सुना दिया। फिर आगे कहा : "हवा, पानी और आग ही सबसे बड़े वैद्यराज हैं—ऐसा वेद में कहा गया है : "अप्सु मे सोमो अब्रवीत् अंतर विश्वानि भेषजा अग्निं च विश्वशं भुवं॥ मरतो मारुतस्य नः अभेषजस्य वहतो सुभानवः॥"

वैद्यराज क्या कहते ? फिर भी किसी एक वनस्पति के पत्ते के रस में शहद मिला कर रोज एक चम्मच लेने और बारिश में भीगने से वात का प्रकोप न हो, इसके लिए एक खास तैल पाँव की तली में लगा कर मालिश करने के लिए कहा। लेकिन ये प्रयोग भी दो-तीन दिन से ज्यादा नहीं चले! बाबा ने वैद्यराज से कहा : "उड़ीसा में जब हम घूमते थे, तब गोपबाबू ने हमें एक कविता ही सुनायी थी : "अंते तिक्त दंते नूण, पेट भरिब तीन कोण। माथेर कापड पायेर तेल, वैद्येर संगे करिबो खेल॥"

—मतलब यह कि पेट के अंदर कुछ कडुई चीज जानी चाहिए। दाँत को नमक से घीसना चाहिए। सिर पर कपड़ा बाँधें और पाँव की तली में रोज तेल लगावें, तो वैद्य के साथ खेल सकते हैं !

"गीता प्रवचन" के बारे में कुछ शंकाएँ यहाँ के लोग बाबा से अकसर पूछते हैं। एक भाई की शंका यों थी : "आप तो शंकराचार्य को गुरु मानते हैं। पर 'गीता-प्रवचन' के १६ वें अध्याय के ८७ वें प्रकरण में आपने कहा है : 'शंकराचार्य के लिए कहते हैं कि उन्हें आठवें साल ही सारे वेदों का ज्ञान हो गया था। बेचारे शंकराचार्य तो थे मंदबुद्धि। उन्हें आठ साल लग गये ! परंतु हमें-तुम्हें तो जन्मतः ही वे प्राप्त हैं।' तो यहाँ शंकराचार्य को मंदबुद्धि कहना कहाँ तक ठीक है ? इससे मुझे बहुत ही दुःख होता है।"

बाबा ने उत्तर दिया—"इसका अर्थ आप ठीक समझ नहीं सके। शंकराचार्य बुद्धिमान् हैं, यह तो सारी दुनिया जानती है। फिर भी हमने ऐसा कहा, तो उसमें कुछ अलग ही अर्थ है। इस तरह का कहना एक अलंकार है। शंकराचार्य ने ही "भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भज मूढ़ मते" में अपने बारे में 'मूढ़ मते' कहा है ! शास्त्रीय दृष्टि से देखें, तो आज जितनी साधन-सामग्री हमारी ज्ञानप्राप्ति के लिए उपलब्ध हैं, उतनी उनके जमाने में नहीं थीं। ऋग्वेद में एक मन्त्र कहाँ-कहाँ कितनी बार आया है, यह उस जमाने में जानना मुश्किल था, पर आज हमें साहित्य की सारी सामग्री उपलब्ध है। इसलिए वेद की हरेक ऋचा का क्या अर्थ हो सकता है, इसका अन्दाज लगाना आसान हो गया है। आज तो वेद का हरेक शब्द कितनी बार कहाँ-कहाँ आया, यह भी हम जानते हैं। इसलिए शंकराचार्य को जितना मैं मानता हूँ, उतना शायद आप भी नहीं मानते होंगे, फिर भी आपको अगर दुःख होता है, तो उसमें इस तरह बदल कर सकते हैं : 'पूछा जाता है, वेद कहाँ है ? वह तो तुम्हारे ही पास है। वैदिक कहते हैं; वेदाभ्यास के लिए बारह साल चाहिए। पर बारह साल की क्या जरूरत है ?'

"लेकिन आप अच्छे साहित्यिक होते, तो ऐसा आक्षेप नहीं करते !"

दूसरी एक जगह दूसरे एक भाई ने यह शंका उठायी : "विकर्म" शब्द को श्रीधराचार्य और शंकरानन्द पंडित ने निषिद्ध कर्म कहा है। आपके 'गीता-प्रवचन' में तो विकर्म माने विशेष कर्म कहा गया है। तो उस अर्थ की उपपत्ति क्या है ?"

बाबा ने कहा : "महाभागवत् में 'विकर्म' शब्द आया है, और भी जगह आया है। 'वि' प्रत्यय का सिर्फ निषिद्ध अर्थ नहीं है। 'वि' प्रत्यय का कभी 'विशेष' और कभी 'विविध' अर्थ भी होता है। 'जय'-'वि-जय' में वि-जय का अर्थ विशेष जय है। 'वि-ज्ञान' माने विविध ज्ञान भी नहीं, 'विशेष ज्ञान' है।

"कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः॥" गीता ४।१७

"इसकी व्याख्या भगवान् खुद करते हैं। विकर्म को निषिद्ध कर्म मानें, तो फिर कई तरह के यज्ञों की चर्चा करने की जरूरत नहीं थी। कर्म करते समय कई विकार उत्पन्न होते हैं। उन विकारों को रोकना चाहिए। उसके लिए स्वधर्म की सहायतार्थ खास मानसिक कर्म करना पड़ता है। मानसिक विशेष कर्म को ही विकर्म कहते हैं। स्वाध्याय, जप, निदिध्यास योग, यम, नियम, ध्यान, भक्ति, क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ-विवेचन आदि मानसिक विशेष कर्मों को स्वधर्म के साथ जोड़ना चाहिए, तब चित्त पर कर्म का बोझ महसूस नहीं होगा और अकर्म की दशा प्राप्त कर सकेंगे।

"दैवमेवापरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते" कह कर "द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथापरे" आदि अनेक यज्ञों के बारे में कहा गया है। "एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे"—यह तो विकर्म की ही व्याख्या है। कर्म के साथ विकर्म मिल जाता है, तो आत्मज्ञान प्राप्त होता है। 'नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते' कर्माकर्म प्रक्रिया का प्रकार यही है। इस प्रक्रिया के बारे में गीता के छठें, सातवें और नवें अध्यायों में बताया है। भागवत् में सत्-असत् ग्राह्य-विवेक को कर्म विकर्म कहा है, लेकिन कर्म में ही विकर्म है, ऐसा मानना कठिन लगता है। स्वधर्माचरण तो कई लोग करते हैं। लेकिन उन्हें आत्मज्ञान नहीं होता, क्योंकि उनमें भक्ति, योग, ध्यान आदि का अभाव है। ये सब मिल जायें, तो वह स्वधर्म विकर्म हो जायगा। व्यक्ति के विकार के अनुसार विकर्म कई तरह के होते हैं। क्रोधी का विकर्म अपना क्रोध रोकने में और कामी का विकर्म काम-वासना रोकने में होना चाहिए।

"स्वधर्माचरण करने वाले कई भाई-बहनों को 'गीता-प्रवचन' की उस विकर्म-व्याख्या से काफी फायदा हुआ है। अलावा इसके, कर्म को जानो और अकर्म को जानो, कहने के बदले विकर्म को भी जानो, यह बीच में कहा है। वैसे ही स्वधर्माचरण के बारे में कहने के बाद और ज्ञान-प्रकरण शुरू करने के पहले यज्ञ-प्रकरण आता है। वह यज्ञ-प्रकरण ही विकर्म है। इस तरह का अर्थ 'ज्ञानेश्वरी' में ज्ञानेश्वर महाराज ने किया है और वेदांतदेशिक के गीताभाष्य में भी वैसी व्याख्या है। पर बाबा को ऐसे साक्षी देने की जरूरत नहीं है। विकर्म को विशेष कर्म मानने से अधर्म तो होता नहीं है, उल्टा फायदा होता है, तो निषिद्ध कर्म क्यों मानें ? गीता पर बहुतों ने भाष्य लिखे हैं। उनमें बाबा का भी एक भाष्य समझिये !"

'महाशक्ति' का आवाहन !

मार्कण्डेय पुराण में एक कथा है : 'एक बार महिषासुर नामक दैत्यराज मधु, कैटभ आदि दैत्यों की सहायता से देव-समाज पर प्रचण्ड अत्याचार करने लगा। अतिशय भोगवाद ने देवगण को शक्तिशून्य एवं निर्वीर्य बना दिया था। आत्म-रक्षा में भी असमर्थ देवगण असुरों के असह्य उत्पीड़न से विह्वल होकर भगवान् विष्णु की शरण में 'त्राहिमाम्, त्राहिमाम्' की पुकार लगाते हुए पहुँचे। भगवान् विष्णु ने देवों के भोगग्रस्त, हत-शौर्य मुख-मण्डल को देख कर कहा कि 'अतिशय ऐन्द्रिय-भोग ने तुम्हारी शक्ति छीन ली है। जाओ, पुनः संयम और तप के द्वारा उसे प्राप्त करो। वही तुम्हारी रक्षा कर सकेगी।' निराश एवं विवश देवगण ने तप में लीन होकर शक्ति का आवाहन किया। देवताओं के कठिन तप एवं त्याग ने शक्ति-देवता को सन्तुष्ट किया। वह अवतरित हुई—जगज्जननी भगवती चण्डी के रूप में। उसकी अनेक भुजाएँ उसकी कठोर कर्मशक्ति की परिचायिका थीं। देवों को उस अनन्त शक्तिमयी, दिव्य नारी के दर्शन से प्रेरणा एवं स्फूर्ति मिली। उनमें नव-जीवन का संचार हुआ। उस सिंहवाहिनी महाशक्ति के दर्शन ने देवों में अतुल पराक्रम भर दिया। फिर महिषासुर आदि राक्षस देवों के आगे टिक न सके—मानो स्वयं दुर्गा ने ही दानवों का विनाश किया !

यह एक रूपक मात्र है, लेकिन आज की परिस्थिति पर भी वह कुछ लागू होता है। वर्तमान समाज का महाअसुर 'व्यक्तिगत स्वामित्व' है। मानव उससे संत्रस्त एवं उत्पीड़ित है। इस महादानव के विनाशार्थ भूक्रांति द्वारा अहिंसा की महाशक्ति का ही आवाहन हुआ है। अतः इन्द्रिय-भोग-लिप्सा और संग्रह से मुक्त होकर हम अपने जीवन को तपोमय बना सकें, तो अहिंसा की महाशक्ति नये रूप में प्रकट हुए बगैर नहीं रह सकती !

—यदुवीर चौधरी

www.vinoba.in

साहित्य-परिचय

सस्ता साहित्य मंडल, नयी दिल्ली

आत्मकथा (ग्यारहवाँ संस्करण), ले० महात्मा गांधी, पृष्ठ ६००, मूल्य २॥)

बापू की अन्यतम आत्मकथा का यह ग्यारहवाँ संस्करण है, जो इतने कम मूल्य में दिया गया है। इसके लिए प्रकाशक धन्यवाद के पात्र हैं।

आत्मकथा (संशोधित संस्करण), ले० डॉ. राजेन्द्र प्रसाद पृष्ठ ७४८, मूल्य ८)

श्रद्धेय राजेन्द्र बाबू की आत्मकथा वस्तुतः केवल उनके जीवन की ही कथा नहीं पेश करती है, बल्कि तत्कालीन राष्ट्रीय जीवन और राष्ट्रीय संग्राम का भी अन्तर्ग्राही परिचय मनोहारी रूप में, सरल भाषा में और रोचक शैली में देती है, साथ ही बिहार का सामाजिक जीवन भी उसमें है। पुस्तक कितनी महत्त्वपूर्ण और उपयोगी है, यह कहने की आवश्यकता नहीं।

पुण्य की जड़ हरी, ले० आदर्श कुमारी पृष्ठ १३६, मूल्य १॥)

इसमें ब्रज की बड़ी सुन्दर लोककथाएँ खड़ी बोली में दी गयी हैं, जो सुरुचिपूर्ण और मनोरंजक तो हैं ही, उपदेशपूर्ण भी हैं। अन्त में एक कथा ब्रजभाषा में भी दे दी गयी है।

जय अमरनाथ (दूसरी बार), ले० यशपाल जैन पृष्ठ ११८, मूल्य १॥)

काश्मीर स्थित अमरनाथ-तीर्थ की यात्रा का सचित्र वर्णन लेखक ने अपनी रोचक और सरल भाषा में दिया है। यात्रियों के लिए पूरी जानकारी भी दे दी गयी है। प्रकृति की रोमांचकारी छटाओं का सुन्दर दर्शन लेखक ने जीवित शैली में कराया है।

क्रांति की भावना, मूल ले० प्रिंस क्रोपाटकीन, सं० बनारसीदास चतुर्वेदी पृष्ठ २०८, मूल्य २॥)

प्रिंस क्रोपाटकीन अराजकवाद के आचार्य माने जाते हैं। प्रस्तुत पुस्तक में समाज-रचना के विभिन्न पहलुओं पर उनका मौलिक चिन्तन है। श्री चतुर्वेदीजी द्वारा लिखित लेखक-परिचय और भूमिका भी है। पुस्तक विचारोत्तेजक और महत्त्वपूर्ण है।

कैरली साहित्य-दर्शन, ले०रत्नमयी दीक्षित, एम. ए. पृष्ठ २७०, मूल्य ४)

श्री काकासाहब ने परिचय में लिखा है: "हरेक युग की विशेषताओं और विचारों का विकास तो इसमें बताया ही है, साथ-साथ उस-उस युग के साहित्य के प्रातिनिधिक नमूने, उच्च अभिरुचि और विवेक के साथ दिये हैं। साथ ही, केरल की शैली की खुशबू कायम रखी गयी और हिन्दी शैली की स्वाभाविकता पर भी आक्रमण नहीं हुआ है।" प्रस्तुत पुस्तक केरलीय साहित्य-दर्शन की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। विनोबाजी ने तो "इसे मानो मेरे लिए ही प्रकाशित की गयी है," कहा है।

तुकाराम गाथा-सार, संग्रहकर्ता-अनुवादक नारायण प्रसाद जैन सं० श्रीपाद जोशी, पृष्ठ १२८, मूल्य १॥)

महाराष्ट्र के संतशिरोमणि तुकाराम, उनका जीवन, उनके विचार, उनके उपदेश आदि का सुन्दर संग्रह इसमें है, जो जीवन का एक आलोक-स्तम्भ है।

रामतीर्थ संदेश: दूसरा भाग (तीसरी बार), ले० स्वामी रामतीर्थ पृष्ठ ४८, मूल्य ।=)

इसमें स्वामी रामतीर्थ के उपदेश मनोरंजक शैली में और कहानियों द्वारा प्रस्तुत किये गये हैं, जो बालकों के लिए बड़े उपयोगी हैं।

शिष्टाचार (तीसरी बार), ले० कंचनलता सब्बरवाल पृष्ठ ५२, मूल्य ॥)

बालकों के लिए आचार सम्बन्धी विचार और सूचनाएँ इसमें हैं।

प्रकाश की बातें, सं० डॉ० सत्यप्रकाश पृष्ठ ४४, मूल्य १॥)

ध्वनि की लहरें, सं० डॉ० सत्यप्रकाश पृष्ठ ४४, मूल्य १॥)

विज्ञान की जानकारी सरल भाषा में और रोचक शैली में देने की योजना जो मंडल ने पेश की है, उसका सुन्दर नमूना ये दो पुस्तकें प्रस्तुत करती हैं। दोनों में प्रकाश एवं ध्वनि के बारे में संक्षेप में, परन्तु अच्छी तरह विवेचन करके सुबोध शैली में सचित्र जानकारी दी गयी है।

समाज-विकास-माला

(१) मीरा के पद, ले० बलवंत सिंह मेहता, **(२) मिल-जुल कर काम करो**, ले० हरिश्चन्द्र विद्यालंकार, **(३) काला पानी**, ले० शांडिल्य, **(४) पाव भर आटा**, ले० वियोगी हरि।

विभिन्न विषयों पर सुन्दर छपाई और सुन्दर गेटअप में ये छोटी-छोटी पुस्तकें प्रकाशक ने प्रस्तुत की हैं, जो प्रौढ़ों, शिक्षितों व बालकों के लिए उपादेय हैं, साथ ही मनोरंजक भी है।

तुलसी राम-कथा: (१) रामजन्म, (२) धनुष-यज्ञ (३) राम-विवाह ले० विश्वम्भर सहाय प्रेमी, प्रत्येक की पृष्ठ-संख्या ३२, प्रत्येक का मूल्य =)

'रामचरितमानस' के आधार पर तुलसी के वचनों-सहित रामकथा विभिन्न रूपों में दी गयी है, जिसकी भाषा सरल, शैली सहज और ढंग आकर्षक है।

गांधीजी ने कहा था: (१) शराब-बंदी करें (दूसरी बार), पृष्ठ ४० मूल्य ॥)
(२) शिक्षा ऐसी हो पृष्ठ ४८, मूल्य ॥)

मौजूदा समस्याओं पर प्रश्न और जवाब के रूप में गांधीजी के विचार इन छोटी पुस्तिकाओं में सरल भाषा में दिये गये हैं।

संस्कृत-साहित्य-सौरभ

(१) **उत्तररामचरित** (तीसरी बार) (भवभूतिकृत) श्री हृदयालु सिंह द्वारा कथासार।

(२) **हर्ष-चरित** (बाणभट्टकृत), श्री वासुदेवशरण अग्रवाल द्वारा कथासार।

(३) **किरातार्जुनीय** (भारविकृत), श्री ज्योतिप्रसाद निर्मल द्वारा कथासार।

(४) **दशकुमार-चरित**: भाग १, भाग २, (दण्डीकृत), श्री कृष्णाचार्य द्वारा कथासार।

(५) **मेघदूत** (कालिदासकृत) श्री विष्णु प्रभाकर द्वारा कथासार।

(६) **पंचरात्र** (भास-कृत), श्री सुशील द्वारा कथासार।

(७) **प्रियदर्शिका** (हर्ष-कृत), श्री नारायणदत्त पाण्डे द्वारा कथासार।

(८) **वासवदत्ता** (सुबन्धु-कृत) श्री नारायणदत्त पाण्डे द्वारा कथासार।

(९) **रावण-वध** (भट्टि-कृत), श्री वासुदेवशरण अग्रवाल द्वारा कथासार।

(१०) **सौन्दरनन्द** (अश्वघोष-कृत) ,, ,, ,,

संस्कृत के महत्त्वपूर्ण नाटक-काव्यादि ग्रंथों के सुंदर और महत्त्वपूर्ण अंशों का संकलन मंडल ने बड़े आकर्षक रूप में, सरल भाषा में और रोचक शैली में प्रस्तुत किया है। यह संकलन चुने हुए अंशों का ही है, लेकिन उपयोगी है और बड़े टाइप में होने के कारण बालकों और प्रौढ़ नवशिक्षितों के लिए भी काम का है। संस्कृत न जानने वालों के लिए ये छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ संस्कृत का काव्य-रस मनोरम रूप में चखा देती हैं।

सुन्दर गेटअप, निर्दोष छपाई, आकर्षक कवर, महत्त्वपूर्ण विषय आदि के रूप में मंडल अच्छे-अच्छे प्रकाशन करता आया है। अब ये विभिन्न मालाएँ भी निकाल कर अच्छे और विविध साहित्य को व्यापक बनाने का नया सफल प्रयास मंडल कर रहा है, जिसके लिए वह बधाई का पात्र है। साथ ही कीमतें भी सस्ती रहें, तो प्रसार में भी अधिक लाभ पहुँचेगा!

पत्र-पत्रिकाएँ

पुरुषार्थ: वीर कथा-विशेषांक (मराठी) सं०-पं० श्रीपाद दामोदर सातवळेकर, प्र० स्वाध्याय-मंडल, किल्ला पारडी (सूरत)। पृष्ठ ४४८, वा० मूल्य ४), इस विशेषांक का २)

प्रस्तुत अंक में प्राचीन और अर्वाचीन, ऐतिहासिक और पौराणिक वीर पुरुषों, वीर महिलाओं, वीर बालकों के बलिदान, त्याग, वीरता आदि की सच्ची कहानियाँ दी गयी हैं। राष्ट्रीय संग्राम में भाग लेने वालों की भी वीरश्रीपूर्ण कथाएँ हैं। समाज-सेवकों की भी जीवन-घटनाएँ दे दी गयी हैं। अंक बहुत सुन्दर और संग्राह्य है। हिंदी में जैसे 'कल्याण' मासिक अपने विशेषांकों के लिए परिश्रम उठाता है, मराठी में 'पुरुषार्थ' मासिक भी उसी तरह परिश्रम करने का प्रयत्न कर रहा है। पिछले साल इसका 'आत्मकथा विशेषांक' ऐसा ही महत्त्वपूर्ण और उपयोगी प्रकाशन था। अच्छा होता कि दूसरे धर्मों एवं समाजों की पर्याप्त वीर, गाथाएँ भी ढूँढ़ कर दे दी गयी होतीं। वैसे कुछ अन्य स्त्रियों की घटनाएँ दी भी गयी हैं, लेकिन इससे भी अधिक घटनाएँ खोजने पर सहज मिल सकती हैं।

दी इकॉनॉमिक वीकली: विशेषांक (अंग्रेजी-साप्ताहिक) १५, टॅमरिंड लेन, फोर्ट, बंबई। पृष्ठ १४६, वार्षिक मूल्य २४), विशेषांक का २॥)

प्रस्तुत पत्रिका अर्थशास्त्रीय विषयों की अच्छी सामग्री देती रहती है। इस विशेषांक में इसी तरह के विविध लेख हैं। निस्संदेह वे महत्त्वपूर्ण हैं। तथापि आज का अर्थशास्त्र कितना एकांगी सोचता है, इसका भी एक एहसास इसे देख कर होता है; क्योंकि देश में ग्रामदान से होने वाली अर्थशास्त्रीय क्रांति का विवेचन शायद उस अर्थशास्त्र में उतना नहीं आता है!

—ल० भा०

www.vinoba.in

लाइसेन्स नं. ए. ३५४ रजिस्टर्ड नंबर ए. ३४
(पहले से डाक-महसूल दिये बिना भेजने का परवाना प्राप्त)

भूदान-आंदोलन के बढ़ते चरण

केरल में कोझीकोड जिले के रामनाटुकरा पड़ाव पर ता० ९ जुलाई को विनोबाजी को दो ग्रामदान मिले। उसी दिन विनोबाजी द्वारा भूमि-वितरण भी किया गया। १३० शिक्षकों ने संपत्तिदान भी दिया।
केरल में अभी कुल ७१ ग्रामदान हुए हैं।

—**गुजरात में भरुच जिले** के छह तालुकों में श्री रविशंकर महाराज ने १ मई से २८ जून तक ४०७ मील की पदयात्रा की। ११७ एकड़ भूदान मिला। ६८ परिवारों में करीब १४५ एकड़ जमीन वितरित की गयी। पाँच वर्ष के लिए १०६५) का संपत्तिदान मिला। अभी पदयात्रा सूरत जिले में चल रही है। हर रोज सुबह ७ बजे एक गाँव से निकल कर दूसरे गाँव और वहाँ से ४ बजे निकल कर आगे के पड़ाव पर जाते हैं। **उनका पत्रव्यवहार का पता : श्री रविशंकर महाराज, स्वराज्य-आश्रम, बारडोली, जि. सूरत।**

—**मध्यप्रदेश** में श्री बाबा राघवदासजी की पदयात्रा १३ अगस्त से **रतलाम जिले के घराड़ ग्राम** से शुरू होगी और २२ अगस्त को जावरा होकर मंदसौर जिले में प्रवेश करेगी। उज्जैन में मध्यप्रदेशीय खादी-ग्रामोद्योग-कार्यकर्ताओं की सभा में भी वे भाषण देंगे।

—**अ. भा. अखंड पदयात्री दल** ने ३ जुलाई से १० जुलाई तक **फैजाबाद जिले** में प्रचार-कार्य किया ११ ता० को जौनपुर जिले में प्रवेश किया। यात्री-टोली के साथ जिले के प्रमुख भूदान-कार्यकर्ताओं ने उत्साह के साथ सहयोग दिया।

—**मध्यप्रदेश के दुर्ग जिले में** २४ जुलाई से खैरागढ़ तहसील की १५००एकड़ प्राप्त भूमि का वितरण करने के लिए ६ टोलियाँ पदयात्रा करते हुए निकल रही हैं।

—ता. १३ जुलाई को **सर्वोदय-आश्रम, रानीपतरा (पूर्णिया) में** श्री लक्ष्मी बाबू के सभापतित्व में भूदान-कार्यकर्ता और रचनात्मक-संस्थाओं के कार्यकर्ताओं की बैठक हुई। निश्चय हुआ कि सब कार्यकर्ता जिले में किसी एक थाने को चुन कर ग्रामदान-प्राप्ति और भूमि-वितरण के उद्देश्य से सघन एवं अखंड पदयात्रा करें। सर्वप्रथम फारबिसगंज थाना चुन कर २५ जुलाई से वहाँ पदयात्रा शुरू कर दी गयी। जिले के प्रभावशाली दाताओं की एक समिति गठित करने का भी निश्चय हुआ।

—**बिहार के पूर्णिया जिले में सर्वोदय-आश्रम, रानीपतरा** स्थित खादी-विद्यालय का उद्घाटन-समारोह १४ जुलाई को बिहार खादी-ग्रामोद्योग-संघ के अध्यक्ष श्री लक्ष्मी बाबू की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। विद्यालय के आचार्य श्री हरिकृष्ण ठाकुर ने बताया कि छात्र-छात्राओं को धुनाई-कताई के अतिरिक्त बौद्धिक ज्ञान की शिक्षा देकर प्रशिक्षित किया जाता रहा, अब उसमें बुनाई की शिक्षा भी जोड़ दी गयी है। अब तक विद्यालय द्वारा १२५ महिलाएँ और पुरुष विद्यार्थी प्रशिक्षित हुए हैं। सभापति-पद से श्री लक्ष्मी बाबू ने कहा, "हम वस्त्र-उद्योगों का विकेन्द्रीकरण करके गाँव के आर्थिक स्वावलंबन की बुनियाद सहज डाल सकते हैं।'

—**८९ दिन के सर्वोदय-शिविर का उद्घाटन नागपुर** में श्री भन्साळीजी ने ६ जुलाई को किया। त्यागमूर्ति पूनमचंदजी राँका के नेतृत्व में प्रतिदिन सफाई, श्रम, सहभोजन, ज्ञान-चर्चा, प्रार्थना आदि कार्यक्रम होते हैं। समाज में नैतिकता और ग्रामोद्योग के प्रचार का काम लगनपूर्वक चल रहा है। छुआछूत और अन्य भेद-भाव मिटाने का भी पूरा प्रयत्न होता है। २ अक्टूबर की गांधी-जयंती को इसका समाप्ति-समारोह होगा।

—**राजस्थान** गांधी-स्मारक निधि के तत्त्व-प्रचार-विभाग की सभा १९ जून को आबू में हुई। सभा में भूदान-कार्य में सक्रिय भाग लेना, साहित्य-प्रचार, शिविर आदि का कार्यक्रम तय हुआ।

—**राजस्थान में सवाई माधोपुर** में जिले के करीब १०० प्रमुख रचनात्मक कार्यकर्ताओं का शिविर ता. ६, ७ व ८ जुलाई को सफलता के साथ संपन्न हुआ। शिविर का कुलपतित्व श्री त्रिलोकचन्द जैन ने किया। श्री गोकुलभाई भट्ट, श्री हरिभाऊजी उपाध्याय, श्री प्रेमनारायण माथुर ने शिविर में भाषण किये।

—**भरतपुर जिले के डीग नगर** में ६ जुलाई को राजस्थान खादी-संघ के के मंत्री श्री रामेश्वर अग्रवाल की अध्यक्षता में ग्रामराज-संमेलन हुआ। श्री हरिभाऊजी उपाध्याय, श्री सत्यन् भाई, श्री पूर्णचन्द्र जैन, श्री बालकृष्ण गर्ग आदि ने अपने विचार प्रकट किये।

—**खजूरी में** २७ जून को एक ग्रामराज-संमेलन हुआ, जिसमें अजमेर, भीलवाड़ा व चित्तौड़ में कार्यकर्ताओं ने २८ अगस्त से १२ फरवरी तक अखंड पदयात्रा करने का निश्चय किया। १५ दिन का साधना-शिबिर भी होगा।

—**पंजाब के हिसार जिले में मुंगेली गांव में** भूमि-वितरण के लिए ग्रामवासियों की सलाहकार-समिति बनी। इस क्षेत्र में करीब छह हजार बीघा भूमि वितरित करनी है। सिरसा तहसील के चौहला ग्राम में १३ भूमिहीन परिवारों में ९६ बीघा भूमि वितरित की गयी। १२ जुलाई को श्री अचिंतरामजी की अध्यक्षता में हिसार जिले के संपत्तिदाताओं की बैठक भी हुई।

भूदान-निवेदकों एवं लोकसेवकों से--

लोक-सेवकों, निवेदकों आदि की ओर से भूदान-कार्य की जो रिपोर्टें आती हैं, वे हर मास की १ ली और १६ वीं तारीख को हमें मिल जाया करें, तो ठीक होगा, ताकि भूदान-पत्रों में हम हर पंद्रहवें दिन उन्हें दे सकें, विनोबाजी को वे भेजी जा सकें एवं केंद्रीय दफ्तर में भी रख सकें। **भूदान-पत्रों में रिपोर्टों का सार ही आ सकता है।**

चूँकि सर्वोदय-संमेलन (कालड़ी) के बाद सारी शक्ति ग्रामदान पर लगाने का संकल्प हुआ है, इसलिए रिपोर्टों में ग्रामदान-संबंधी जानकारी स्वभावतः ही अधिक हो, यह सबकी अपेक्षा है। यह जानकारी सही हो और इस प्रकार हो : **ग्रामदानी गाँव, कुल लोकसंख्या, कुल भूमि, प्राप्त भूमि, दाता, अन्य जानकारी व तिथि।**

शेष जानकारी, निम्न प्रकार की तालिका (तख्ता) बना कर उन-उन खानों में, भर कर भेजी जाय तो सुविधा होगी : प्रदेश नाम-जिला-विवरणकाल-प्राप्त भूमि-दाता-वितरित भूमि-परिवार-संपत्तिदान एवं अन्य दान--साहित्य-प्रचार-नये लोकसेवकों की वृद्धि-कुल मील पदयात्रा-कुल पड़ाव एवं अन्य। प्रत्येक रिपोर्ट में अपना नाम-पता साफ अक्षरों में रहे।

—लोकसेवक-विभाग

सूचना : सर्वोदय-विचार-शिविर, जयपुर

—राजस्थान-गांधी-स्मारक-निधि के तत्त्व-प्रचार-विभाग की ओर से १५ से १९ अगस्त तक राजस्थान के लगभग ५० विद्यार्थियों-शिक्षकों और रचनात्मक कार्यकर्ताओं का एक शिविर दुर्गापुरा कैम्प, जयपुर में होगा। शिविर में प्रवेश के इच्छुक अपना नाम श्री संयोजक, गांधी-अध्ययन-केन्द्र, जयपुर के पते पर भेजें। भोजन और सफर का खर्च निधि की ओर से उठाया जायगा।—**नेमिशरण मित्तल, संगठक**

श्री विनोबाजी का और श्री वल्लभस्वामीजी का डाक-तार का पता : मार्फत : श्री श्यामजी सुंदरदास, कोझीकोड़ (केरल) KOZHIKODE-1. (KERAL)

विषय-सूची

१. दुनिया की रफ्तार !	विनोबा	१
२. मध्यम वर्ग : खतरे के कगार पर !	सिद्धराज ढड्ढा	२
३. शिक्षकों का महान् दायित्व	विनोबा	३
४. विनोबा-प्रश्नोत्तरी	,,	३
५. सर्वोदय-क्रांति प्रगति-पथ पर है !	धीरेन्द्र मजूमदार	४
६. अपने भी धन की वासना न रहे !	विनोबा	४
७. रोग की जड़ !	दादा धर्माधिकारी	५
८. संत-परंपरा में भूदान-यज्ञ	शिवाजी भावे	५
९. खतरे से सावधान !	विनोबा	६
१०. सर्वोदय की दृष्टि : स्व० नरहरि भाई परीख	दादा धर्माधिकारी	६
११. अब मतभेद कहाँ रहे ?	अशोक मेहता	६
१२. पंचामृत	—	७
१३. सेवाग्राम में नयी तालीम की अध्ययन-गोष्ठी	विमलाबहन	९
१४. केरल की क्रांतियात्रा से—	गोविंदन्	१०
१५. 'महाशक्ति' का आवाहन !	यदुवीर चौधरी	१०
१६. साहित्य-परिचय	—	११
१७. भूदान-आंदोलन के बढ़ते चरण आदि	—	१२

सिद्धराज ढडढा, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव-भूषण-प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, काशी, टे० नं० १२८५

www.vinoba.in